योगशिक्षा

भाग–तीन

(उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए)

कक्षा – 9 से 12 के लिए

''आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः''

2015–2016

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

निःशुल्क वितरण हेतु

प्रकाशन वर्ष – 2015

एस. सी. ई. आर. टी. रायपुर, छत्तीसगढ़

मार्गदर्शक

संचालक

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर (छ.ग.)

सहयोग

जिला जीवन विज्ञान अकादमी दुर्ग–भिलाई

मानव आस्था केन्द्र–रायपुर, गायत्री शक्तिपीठ रायपुर

स्थायी समिति के सदस्य : डॉ. एस.एस. त्रिपाठी, डॉ. निरूपमा शर्मा,

श्री बी.व्ही. देशपाण्डे, श्री सुरेश कुमार ठाकुर

समन्वयक एवं सम्पादक

श्री बी.पी.तिवारी

लेखक–समूह

श्री गजानन्द प्रसाद देवांगन,डॉ. सन्तोषकुमार तिवारी, श्री घनश्यामलाल डडसेना, श्री तोकनकुमार शर्मा, श्री लच्छूराम निषाद, श्री छगनलाल सोनवानी,

श्रीमती रेखा चौधरी, श्री शिवशंकर नामदेव, श्री नारायणसिंह चन्द्राकर

ले–आउट डिजाइनिंग एवं टायपिंग

रेखराज चौरागड़े, कुमार पटेल

चित्राकंन

समीर श्रीवास्तव, अजय सक्सेना

प्रकाशक

छत्तीसगढ़ पाठ्यपुस्तक निगम, रायपुर

मुद्रक

प्राक्कथन

आज सम्पूर्ण विश्व में 'योग' के कारण क्रांति आ गई है। योग को एक विज्ञान के रूप में मान्यता दी गई है। ऐसी स्थिति में 'छत्तीसगढ़ शासन' ने विद्यार्थियों को संस्कारित करने के लिए 'योग' की उपादेयता एवं अनिवार्यता को समझा है। इसलिए शासन ने योग एवं मूल्य शिक्षा को पाठ्यक्रम में शामिल किया है।

सृजन पालन एवं विनाश की शक्ति की शाश्वतता को एक स्थित प्रज्ञ ही अनुभूति कर सकता है और यह स्थितप्रज्ञता चित्त वृत्तियों के निरोध की अवस्था में ही हो सकती है। महर्षि *पतञ्जलि* ने भी लिखा है– योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध योग से ही संभव है।

पंचमहाभूत ***" क्षितिजल पावक गगन समीरा"*** से ही मनुष्य के शरीर एवं मन की संरचना हुई है। मन की चेतना शक्ति ब्रह्म के सन्निकट होती है। व्यक्ति को उसी चेतना शक्ति के आधार पर जीवनी शक्ति प्राप्त होती है। व्यक्ति का आचार–विचार, उसकी मानसिकता सभी कुछ उसी चेतना शक्ति के वृद्धि पर निर्भर करता है। इसी से व्यक्ति परम आनंद का अनुभव करता है।

आज मनुष्य नैतिकता की दौड़ में यंत्रवत हो गया है। उसका आध्यात्मिक विकास अवरूद्ध सा हो गया है। अर्थ प्राप्ति की भागमभाग में, संवेदनशीलता लुप्तप्राय हो गई है। शाश्वत जीवन मूल्य जीवन से दूर हो चुके हैं। अतएव भौतिकता और आध्यात्मिकता का सामंजस्य आवश्यक हो गया है और इसके लिए एक मात्र योग ही वह सुगम पथ है, जिसके माध्यम से इस उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है।

योग एक विज्ञान के साथ वह जीवन शैली एवं पद्धति है, जिससे मनुष्य निरोग, स्वस्थ, सुन्दर, पवित्र और सक्षम रहता हुआ, जीवन पर्यन्त सुख और आनंद का अनुभव करते हुए उच्चशिखर को प्राप्त कर सकता है। योग सत्यं शिवं सुन्दरम् की प्रखर अभिव्यक्ति है अतः ईश्वर के प्रति पूर्ण आस्था, विश्वास एवं आत्मसर्मपण का ही नाम योग है।

आज योग की उपादेयता को समझते हुए शासन ने प्राथमिक, पूर्व माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर तक की कक्षा– 1 से 12वीं तक के लिए योगशिक्षा पाठ्यपुस्तकों के निर्माण का दायित्व राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् को सौंपा है।

विद्यालयों में योग शिक्षा के द्वारा विद्यार्थियों के मन, बुद्धि, व चित को पुष्ट करने के साथ –साथ शारीरिक विकास पर भी बल दिया जा सकेगा।

प्राथमिक स्तर पर बच्चों के उम्र के अनुरूप योगासनों का अभ्यास कराया जावेगा, साथ ही

व्यक्तिगत स्वच्छता परिवेशीय स्वच्छता, नियमितता, वाणी व्यवहार, राष्ट्रीय प्रेम एवं स्वावलम्बन के मूल्यों को संस्कारित किया जावेगा।

पूर्व माध्यमिक स्तर पर प्राणायाम, ध्यानमुद्रा, शरीर, मन व आत्मशक्ति के विकास हेतु छात्रों के स्तर के अनुरूप आसनों का अभ्यास कराया जावेगा। साथ ही, सामाजिक, राष्ट्रीय प्रेम, कर्तव्यपालन, पारस्परिक सहयोग, जीवन संघर्ष के लिए सक्षम बनाना पर्यावरण जागरूकता एवं भारतीय संस्कृति के प्रति आदर भावों आदि मूल्यों को भी विकसित किया जावेगा।

उच्चतर स्तर की कक्षाओं में उपर्युक्त मूल्यों एवं आसनों के अभ्यास के साथ कुछ कठिन एवं उपयोगी आसनों का अभ्यास कराया जावेगा। सभी आसनों का पूर्वाभ्यास भी कराया जावेगा। प्राणायाम के साथ तीन बंधों का अभ्यास भी कराया जावेगा। साथ ही शाश्वत जीवन मूल्य, समाज के प्रति जागरूकता, अस्तेय, दैनिक जीवन में समता, सहयोग, सामाजिक कुरीतियों के प्रति जागरूकता, धर्म, जाति, भाषा, लिंग के पूर्वाग्रह से दूर होना, नशीले पदार्थों का त्याग, विश्वबंधुत्व की भावना, पर्यावरण सजगता के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जावेगा।

इस तरह योगाभ्यास से जीवन मूल्यों को व्यवहारगत बनाने के साथ–साथ विद्यार्थियों के मन, बुद्धि व हृदय में रूपान्तरण कर चरित्र को उदात्त बनाया जायेगा।

पाठ्यपुस्तक के निर्माण में प्रबुद्ध लेखकों के प्रति हम कृतज्ञ हैं। जिनकी निष्ठा और लगन के फलस्वरूप पाठ्यपुस्तक अपनी बहुआयामी आकृति पा सकी है।

अंत में पाठ्यपुस्तक के निर्माण में जिनकी परोक्ष व अपरोक्ष रूप से सहभागिता रही है, उनके प्रति हम साधुवाद ज्ञापित करते हैं।

हमें विश्वास है, योगशिक्षा पाठ्यपुस्तक नवचेतना का संचार कर विद्यार्थियों, शिक्षकों, पालकों व समाज में आत्मोन्नयन के लिए उपयोगी होगी।

संचालक
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर

अनुक्रम

अध्याय :	एक	पृष्ठ क्र.
1.1	योग शिक्षकों के लिए सामान्य निर्देश	1
1.2	योग को विद्यालय में प्रभावी बनाने हेतु कुछ सुझाव	3
अध्याय :	**दो**	
2.1	गुरुवंदना	5
2.2	सरस्वती वंदना	5
2.3	प्रार्थना	5
2.4	गायत्रीमंत्र	7
2.5	शान्तिपाठ	7
2.6	योग क्या है?	9
2.7	योगासन हेतु सावधानियाँ	10
अध्याय :	**तीन**	
3.1	अष्टांग योग	11
3.2	शरीर रचना	14
3.3	मेरूदंड मांसपेशियाँ और गतियाँ	15
3.4	रक्त संस्थान, फुफ्फुस और हृदय, पाचन तंत्र	16
अध्याय :	**चार**	
4.1	आसन का तात्पर्य और उनके प्रकार	21
4.2	स्वस्तिकासन	22
4.3	भद्रासन	22
4.4	गोमुखासन	23
4.5	गोरक्षासन	23
4.6	अर्ध मत्स्येन्द्रासन	24
4.7	योगमुद्रा	25
4.8	उदराकर्षण	25

4.9 आकर्णधनुरासन 26
4.9 विपरीतकरणी 26
4.10 सर्वांगासन 27
4.11 हलासन 28
4.12 आवश्यक निर्देश 28

अध्याय : पाँच

5.1 सूर्य नमस्कार 29
5.2 प्राणायाम 33
1. नाड़ी शोधन प्राणायाम 33
2. अनुलोम–विलोम प्राणायाम 33
3. शीतली प्राणायाम 34
4. शीतकारी प्राणायाम 35
5. भस्त्रिका प्राणायाम 35
6. कपालभांति प्राणायाम 36
7. भ्रामरी प्राणायाम 36

अध्याय : छः

6.1 मुद्राएँ 38
6.2 बंध 39
6.3 दृष्टि 41
6.4 षट्कर्म 41

अध्याय : सात

7.1 स्थूल व्यायाम 44
7.2 सूक्ष्म व्यायाम 47
7.2 प्रस्तावित मूल्य शिक्षा पाठ्यक्रम 74
7.3 मानवीय मूल्यों के घटक 76

पाठ्यक्रम

उच्च एवं उच्चतर माध्यमिक विभाग (कक्षा 9 से 12)

निर्देश :— 1. पूर्व की कक्षाओं के आसनों का अभ्यास अवश्यकतानुसार कराएँ।

2. सुखासन, पद्मासन, वज्रासन, शीर्षासन, सर्वागासन, सूर्यनमस्कार और शवासन का अभ्यास प्रत्येक कक्षा के छात्र– छात्राओं को कराएँ

आसन

1. गोमुखासन
2. गोरक्षासन
3. अर्ध मत्स्येन्द्रासन
4. स्वस्तिकासन
5. सिद्धासन
6. वृश्चिकासन
7. भद्रासन
8. बकासन
9. उदराकर्षण आसन
10. आकर्ण धनुरासन
11. गर्भासन
12. कुक्कुटासन
13. विपरीतकरणी
14. योगमुद्रा

निर्देश – 1 पूर्व कक्षाओं में करायें प्राणायाम, मुद्राएँ, दृष्टि और षटकर्म का अभ्यास उच्चतर माध्यमिक विभाग के छात्र–छात्राओं को भी कराएँ।

2. प्राणायाम कराते समय नीचे लिखें तीन बंध का अभ्यास कराया जाना आवश्यक है।

बंध

1. मूल बंध
2. उड्डियान बंध
3. जालन्धर बंध

स्थूल व्यायाम : क्रमांक 1 से 5 तक।

सूक्ष्म व्यायाम : क्रमांक 1 से 48 तक।

अध्याय : एक

1.1 योग शिक्षकों के लिए सामान्य निर्देश

1. योग शिक्षा का कार्यभार उन्हीं अध्यापकों को दिया जाना चाहिए जिन्होंने इस बारे में स्वाध्याय और अभ्यास किया हो और इस कारण इस विषय में कुछ निष्ठा बनी हो अर्थात् योग का शिक्षक इस विषय में अच्छी जानकारी और अनुभव रखता है।

2. योग शिक्षकों को शिक्षा पाठ्यक्रम की पुस्तिका, इसकी भूमिका तथा उनमें निहित किसी एक योग्य पद्धति को अच्छी तरह पढ़ना चाहिए व उसी के अनुसार अभ्यास करना चाहिए। ऐसी पुस्तकें उनके स्वाध्याय हेतु विद्यालय में रखी जाएँ तथा उन पुस्तकों में योगासन सचित्र होने चाहिए।

3. जो भी आसन या क्रिया सिखानी हो, उसकी विधि और लाभ विद्यार्थियों को पहले समझा देने चाहिए।

4. योगासन या क्रिया का कार्यक्रम कराते समय कब, कौन से आसन या क्रिया कैसे कराई जाए, यह ध्यान में रखना चाहिए।

5. योग करते समय विद्यार्थी अपना ध्यान कहाँ एकाग्र करें यह अवश्य बताना चाहिए।

6. शरीर के भाग पर जोर पड़ने वाले आसन करने के बाद उसके विरुद्ध भाग पर जोर पड़ने वाले आसन अवश्य कराने चाहिए जैसे – हलासन के बाद चक्रासन।

7. किस प्रकार की वेश–भूषा में योग सुविधापूर्वक हो सकता है – यह शिक्षक स्वयं भी ध्यान में रखें और विद्यार्थियों को भी बताएँ।

8. योगासन खाली पेट करवाना चाहिए अर्थात् खाना के तीन–चार घंटे बाद ही योग कराया जा सकता है। बालक से पूछें कि उसने कब, कैसे भोजन किया या प्रातः शौच हुआ या नहीं, यह जानकार ही योगासन कराना चाहिए वरना हानि हो सकती ।

9. सात्विक आहार और स्वास्थ्य का सम्बन्ध जानें।

10. योगासन करते समय यदि किसी बालक से गलती हो या उससे उससे योग न होता हो तो उसे डाँटना नहीं चाहिए।

11. बालकों को योग क्रिया कराते समय शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि बालक उस

आसन को सरलता से कर रहा है, कहीं जोर जबरदस्ती तो नहीं कर रहा अथवा किसी विद्यार्थी को परेशानी तो नहीं हो रही है।

12. प्रत्येक आसन की अन्तिम सही स्थिति तक पहुँचने के लिए अनेक सरल–चरणों का ज्ञान होना चाहिए। उसके लिए स्वयं भी आसनों की रचना सोचते व करते रहना चाहिए।

13. प्रत्येक आसन के पश्चात् शवासन द्वारा अंग शिथिल कराकर ही दूसरा आसन कराएँ।

14. योग सिखाते समय छात्रों की आयु, शक्ति व बीमारी आदि का ठीक विचार करके धीरे– धीरे अभ्यास कराना चाहिए।

15. किन आसनों व क्रियाओं के करने से किन रोगों का नाश हो जाता है – यह शिक्षक को अवश्य मालूम होना चाहिए।

16. शिक्षक कक्षा में कहानी द्वारा विषय स्पष्ट करें।

17. योग शिक्षक आपस में अवश्य परामर्श करें, परन्तु विद्यार्थियों के सामने नहीं।

18. अधिक आसन व क्रियाएँ करने के स्थान पर कम आसन व क्रियाएँ अधिक समय तक करना उपयोगी रहता है।

19. योग शिक्षक व्यावहारिक जीवन में योग विषय का ज्ञाता रहे। इस दृष्टि से उसका स्वयं का निरन्तर एवं प्रत्यक्ष अनुभव के व्यावहारिक रूप के लिए चल रहे योग केन्द्र से भी जीवन्त सम्पर्क रखें तथा अपने लिए भी 'सिखाने की पद्धति' की जगह 'सीखने की पद्धति' को जीवन में उतारे।

20. बालकों के घरेलू वातावरण को जानने के लिए शिक्षक–अभिभावक सम्मेलन आदि आयोजित करने चाहिए तथा अभिभावकों को भी योग का महत्व बताना चाहिए।

21. योग शिक्षक को योग कराते समय स्थान का भी उचित चुनाव करना चाहिए जैसे खुला स्थान बड़ा हाल। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि –

    (अ) योग समतल स्थान पर करें।

    (ब) स्थान छायादार हो तथा वहाँ पर किसी प्रकार का शोर न हो।

    (स) योग आसन मोटी दरी पर करना चाहिए।

22. योग बहुत बड़े समूह में न करवा कर छोटे समूह में करवाना चाहिए।

23. योग में केवल आसन ही नहीं, आसन के साथ साधारण प्राणायाम तथा योग प्रक्रियाओं के प्रति रुचि और निष्ठा विकसित होनी चाहिए।

24. धीरे–धीरे शिक्षक ऐसी आसन श्रृंखला व योग श्रृंखला बता सके जिसे बालक नियमित रूप से अपने घर पर भी ठीक से करना प्रारम्भ कर सकें।

25. विद्यालय समय से पूर्व या बाद में छात्रों का योग वर्ग लगाया जा सकता है।

1.2 योग को विद्यालय में प्रभावी बनाने के सम्बन्ध में कुछ सुझाव

1. योग विषय में रुचि रखने वाले शिक्षकों को ही इस दिशा में क्रमशः आगे बढ़ाए जाएँ। क्रमशः सबकी रुचि बढ़ानी है, यह उद्देश्य हो।

2. प्रार्थना सभा बड़ी प्रभावी बनाई जाए। ॐ जप, मौन, ध्यान का भी प्रार्थना सभा में समावेश हो। योग सम्बन्धी, विशेषकर यम नियम की व्याख्या करने वाली कहानियाँ प्रार्थना सभा में सुनाई जाएँ।

3. योग कक्ष या ध्यान–कक्ष की व्यवस्था विद्यालय स्तर पर की जाए।

4. आवासी विद्यालयों में इसे नित्य प्रति कार्यक्रम में रखा जाए।

5. योग प्रशिक्षण की प्रक्रिया अनवरत बनाये रखने की आवश्यकता है।

6. योग की प्रक्रिया की प्रत्यक्ष जानकारी के लिए योग डायरी बनवाना उपयुक्त रहेगा।

7. मन्द–बुद्धि के बच्चों के लिए योग की विशेष कक्षाएँ ली जाएँ तथा उनके विकास का मूल्यांकन किया जाए।

8. योग पखवारा मनाया जाए जिसमें योग के बारे में विस्तार से बताएँ।

9. योग के अंतर्गत मौन दिवस का आयोजन किया जाए।

10. ॐ या कोई मन्त्र अधिकतम लिखने (लिखित जप के रूप में) के लिए प्रेरित किया जाए।

11. आने वाली महापुरुष की जयन्ती पर महापुरुष के सम्बन्ध में जीवन का वह हिस्सा लिखना

जिसमें योग का प्रभावी रूप आया हो।

12. अनेक विद्यालयों को मिलाकर इकाई बना सकते हैं और उनकी योग पर भाषण प्रतियोगिता रखी जा सकती है।

13. प्रायः बच्चों या बड़ों की बैठक में भी प्रारम्भ में ऊँकार और ध्यान का थोड़ा कार्यक्रम कराकर फिर अन्त में किसी भजन से समाप्त करना उपयोगी होगा।

14. कक्षा शिक्षण में बेला प्रारम्भ होने से पूर्व ध्यान या ऊँकार कराये तब शिक्षण प्रारम्भ करें, अधिक आनन्द आयेगा।

15. कक्षा में शिक्षण के पूर्व गत दिवस की अध्यापित विषय वस्तु को ध्यान की स्थिति में स्मरण करना तथा आने वाली विषय वस्तु से सहसम्बन्ध जोड़ने के लिए भी कहा जा सकता है।

16. विद्यालय के वार्षिकोत्सव में योगासन का अच्छा एवं प्रभावी प्रदर्शन रखा जायें यह ध्यान में रहें कि समग्र–योग के साथ समष्टीकरण किये बिना इसका योग–दृष्टि से कोई मूल्य न होगा। केवल प्रदर्शन वृत्ति को बढ़ावा मिलेगा।

17. प्रदर्शनी लगाई जाए – (विषय देकर)– सत्यम्, शिवम् या सुन्दरम् कार्य का आधार लिया जाए।

18. बालक के शरीरिक व मानसिक विकास में योग का क्या परिणाम रहा, यह अनुभव कर, उसे बताएँ।

19. मनोवैज्ञानिक आधार लेकर विद्यार्थी के आयु–वर्ग के अनुसार कुछ परीक्षण किया जाए फिर उस पर क्या क्रमिक परिवर्तित परिणाम आते हैं। इसका अध्ययन किया जाए।

अध्याय : दो

2.1 गुरुवन्दना

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परमब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

2.2 श्री सरस्वती वन्दना

या कुन्देन्दुतुषारहार धवला या शुभ्रवस्त्रावृत्ता

या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना।

या ब्रह्मच्युतशंकर प्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता

सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा।।

जो कुन्दपुष्प, चन्द्रमा, बर्फ (तुषारहार) के समान धवल (श्वेत) हैं, जो शुभ्र (श्वेत) वस्त्र धारण करती हैं, जिनके हाथ उत्तम वीणा से सुशोभित हैं, जो श्वेतकमलासन पर विराजमान हैं, ब्रह्म, विष्णु, महेश आदि देवों के द्वारा जिनकी वंदना की जाती है, सब प्रकार की जड़ता को दूर करने वाली ऐसी भगवती सरस्वती मेरा पालन करें, मेरी रक्षा करें।

2.3 प्रार्थना–1

वह शक्ति हम दो दयानिधे, कर्त्तव्य मार्ग पर डट जावें।

पर सेवा पर उपकार में हम, निज जीवन सफल बना जावें।।

हम दीन दुःखी निबलों विकलों के, सेवक बन सन्ताप हरें।

जो हैं अटके भूले भटके, उनकों तारें खुद तर जावे।। वह शक्ति हमें दो .....

छल दम्भ द्वेष पाखण्ड झूठ, अन्याय से निश दिन दूर रहें।

जीवन हो शुद्ध सरल अपना, शुचि प्रेमसुधा रस बरसावें ।। वह शक्ति हमें दो .....

निज आन–मान मर्यादा का प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे।

जिस देश–जाति में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जावें।। वह शक्ति हमें दो ....

प्रार्थना–2

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।

अमर आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।

अखिल विश्व का जो परम आत्मा है।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।। 1 ।। शिवोऽहम् .....

अमर आत्मा है मरणशील काया।

सभी प्राणियोंके जो भीतर समाया।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 2 ।। शिवोऽहम् ......

जिसे शस्त्र काटे न अग्नि जलावे।

बुझावे न पानी न मृत्यु मिटावे।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 3 ।। शिवोऽहम् .....

है तारों सितारों में आलोक जिसका।

है चन्दा व सूरज में आभास जिसका।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 4 ।। शिवोऽहम् .....

जो व्यापक है, कण कण में है वास जिसका।

नहीं तीनों कालों में हो नाश जिसका।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 5 ।। शिवोऽहम् .....

अजर और अमर जिसको वेदों ने गाया।

वही ज्ञान अर्जुन को हरि ने सुनाया।

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ।। 6 ।।

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्।।

पाठ्यक्रम के अन्त में तीन बार ओ३म् का सस्वर उच्चारण करते हुए भ्रामरी प्राणायाम करें ।

2.4 गायत्री मंत्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं।

भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

(यजु.३६/३) (ऋ–३६२/१०)

भावार्थ : उस प्राणस्वरूप, दुखनाशक, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अन्तरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।

2.5 शान्ति पाठ

ओ३म् असतो मा सद्गमय,

तमसो मा ज्योतिर्गमय,

मृत्योर्मा अमृतं गमय,

सर्वेषां शान्तिर्भवतु,

सर्वेषां पूर्णं भवतु,

सर्वेषां मंगलं भवतु,

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्ता, न्यायेन मार्गेण मही महीशा।

गो ब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं, लोकाः समस्ताः सुखिनों भवन्तु।।

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।

उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वेसन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग भवेत्।।

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ॅ शान्तिः ।

पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः।

सर्व शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः

सा मा शान्तिरेधि।। ओ३म् शान्तिः! शान्तिः! शान्तिः।। **(अजुर्वेद ३६/१७)**

नाऽहं कर्ता हरि कर्ता

हरि कर्ता हि केवलम्

नाऽहं कर्ता गुरु कर्ता

गुरु कर्ता हि केवलम्

त्वमेव माता च पिता त्वमेव।

त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव।

त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

योग क्या है :–

(भवतापेन तप्तानाम् योगो हि परमौषधम्)

योगासन

योग शब्द 'युज्' धातु से बना, जिसका अर्थ होता है जोड़ना। जीवात्मा का परमात्मासे मिल जाना, एक हो जाना ही योग है।

योगाचार्य महर्षि पतञ्जली ने सम्पूर्ण योग के रहस्य को अपने योगदर्शन में सूत्रों के रूप में उपदेश किया है।

चित्त को एक जगह स्थापित करना 'योग' है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः

याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है –

अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम्

जिस योग साधन द्वारा आत्मदर्शन या ब्रह्मसाक्षात्कार हो वही परमधर्म है।

'श्रीमद्भगवद्गीता' में श्री कृष्ण ने कहा है – ''योगः कर्मसु कौशलम्''

प्रत्येक काम को कुशलता से सम्पन्न करना योग है।

कृष्ण ने गीता में यह भी कहा है – ''समत्वं योग उच्यते''

समता की भावना ही श्रेष्ठ योग है।

2.6 योगासन हेतु सावधानियाँ

1. योगासन करने से पूर्व शौच, स्नान आदि से निवृत्त हो जाएँ।
2. प्रातःकाल योगासन करना अधिक लाभकारी है।
3. योगासन करने के तुरन्त बाद स्नान नहीं करना चाहिए। पसीना को पंखे से न सुखाएँ, शरीर का ताप सामान्य होने पर स्नान करें।
4. योगासन के आधा घंटा पश्चात् दूध, दलिया, फल या अँकुरित अनाज थोड़ी मात्रा में अवश्य लेना चाहिए।
5. आसन एकान्त तथा धूल, मिट्टी व धुआ रहित स्थान पर किया जाना चाहिए। घर की छत, पार्क, नदी के किनारे अथवा ऐसे खुले स्थान पर करना चाहिए जहाँ शुद्ध हवा आती जाती हो। अधिक ठंड में योगासन खुले कमरे में करें।
6. आसन करते समय शरीर पर वस्त्र कम से कम और ढ़ीले होनें चाहिए।
7. समतल भूमि पर गरम कंबल मोटी दरी बिछाकर ही आसन करें। खुली भूमि पर बिना कुछ बिछाकर आसन कभी न करें, जिससे शरीर में निर्मित होने वाला विद्युत प्रवाह नष्ट न हो जाए।
8. श्वास मुँह से न लेकर नाक से ही लेना चाहिए।
9. आसन करते समय शरीर के साथ जबरदस्ती न करें, अतः धैर्य पूर्वक आसन करें।
10. आसन के पूर्व थोड़ा ताजा जल पीना लाभदायक है। आक्सीजन और हाइड्रोजन में विभाजित होकर संधि स्थानों का मल निकालने में जल बहुत सहायक होता है।
11. आसन की स्थिति में श्वासप्रश्वास का विशेष ध्यान रखें।
12. आसन करते समय शरीर में जिस स्थान पर खिंचाव पड़ रहा हो, कष्ट होने लगे या पीड़ा का अनुभव हो तो उस अभ्यास को तुरन्त बंद कर देना चाहिए।
13. आसन जितने समय तक सरलता से कर सकें उतने समय तक ही करें।
14. आसन नियमित तथा एकाग्रचिन्त होकर प्रसन्न मुद्रा में करना चाहिए।
15. आसन में प्रतिस्पर्धा नहीं करना चाहिए।
16. रुग्णावस्था में कुशल योग शिक्षक की देख–रेख में विशेष आसन करना चाहिए।
17. भोजन के चार घंटे बाद ही आसन किया जा सकता है।

अध्याय : तीन

3.1 अष्टाँग योग

योग के द्वारा विभिन्न दशाओं को पार करता हुआ व्यक्ति मन और आत्मशक्ति का विकास करता हुआ आत्मज्ञान को प्राप्त होता है।

हमारे ऋषि–मुनियों ने योग के द्वारा शरीर मन और प्राण की शुद्धि तथा परमात्मा की प्राप्ति के लिए आठ प्रकार के साधन बतलाए हैं, जिसे अष्टाँग योग कहते है। ये हैं–

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रात्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

1. **यम–** सामाजिक व्यवहार में आने वाले नियमों को यम कहते हैं। जैसे किसी को न सताना, यातना न देना, लोभ लालच न करना, चोरी, डकैती न करना अर्थात् कोई ऐसा कार्य न करना जिससे मानव समाज के किसी भी अंग का अहित होता है।

2. **नियम–** इसका संबंध आपके अपने चरित्र से है। व्यक्तिगत चरित्र स्वच्छ और उत्तम होना चाहिये। जब आपका अपना चरित्र ठीक होगा तो आप समाज के एक श्रेष्ठ अंग बन जायेंगे। श्रेष्ठ समाज उत्तम व्यक्तियों से ही मिलकर बनता है।

3. **आसन–** शरीर के विभिन्न अंगों के विकास के लिये जो यौगिक क्रियाएँ की जाती हैं। उन्हें आसन कहा जाता है।

4. **प्राणायाम–** यूं तो प्राण विज्ञान बहुत व्यापक विषय है, परन्तु इसके अनेक अंगों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है –

   प्राण + आयाम अर्थात् प्राणों का आयाम

   1. प्राण वायु को सन्तुलित रूप से लेना।
   2. नियमित रूप से गहरी और लंबी साँस लेना।
   3. प्राण पर सदैव ध्यान रखना।

5. **प्रत्याहार–** किसी भी वस्तु में लिप्त न होना यानी ''पद्मपत्रमिवाम्भसा'' ''जल में जैसे कमल है रहता जग में वैसे रहना'' पर वह जल में गीला नहीं होता उसी प्रकार रहना। संसार में आसक्ति अनासक्तभाव से रहना प्रत्याहार है।

6. धारणा— अपने मन को एकाग्र करना या एकाग्रचित होना ही धारणा है। यह बहुत बड़ी बात है और जीवन में सफलता की कुंजी है।

7. ध्यान— प्रभु का चिन्तन करना और उसके स्मरण में चित को लगाना ध्यान कहलाता है।

8. समाधि— समाधि लग जाने पर मनुष्य के अन्तर में स्वतः ही प्रकाश दिखने लगता है।

लाभ— इन आठों प्रक्रियाओं से मानसिक आध्यात्मिक और शरीरिक विकास होता हैं। और आपका शरीर स्वस्थ होगा। उसके विकार दूर होंगें आपका मन स्वच्छ होगा और आप एक आदर्श व्यक्ति कहलाएँगे।

1. यम

''अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः''

यम का अर्थ है व्रत—पंचव्रत :— जिसे अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह कहते हैं।

1. अहिंसा— अहिंसा का अर्थ है, हिंसा न होना। मन वचन कर्म से किसी प्राणी को न सताना अहिंसा है।

2. सत्य— सत्य का एक अर्थ है — झूठ न बोलना।

जिस वार्तालाप और व्यवहार से सबका हित हो वह सत्य है।

3. अस्तेय— चोरी न करना। पराई वस्तु को उसके स्वामी से पूछे बिना न लेना अस्तेय है।

4. ब्रह्मचर्य— ब्रह्मचर्य का मूल अर्थ है इन्द्रिय संयम।

शरीर की शक्ति का रक्षण ब्रह्मचर्य है।

5. अपरिग्रह— अपरिग्रह का एक और नाम है असंग्रह अर्थात् संग्रह न करना। अनावश्यक वस्तुएँ द्रव्य आदि को एकत्र ना करना अपरिग्रह है।**म**

2. नियम

शौचसंतोषतपःस्वध्यायईश्वरप्रणिधानानि नियमाः

i. शौच

शौच का अर्थ है पवित्र। शरीर और मन दोनों की पवित्रता से वास्तविक अर्थ पूरा होता है।

ii. सन्तोष

'सम्' उपसर्ग पूर्वक ''तुष् प्रीतौ'' धातु से संतोष शब्द बना है।

सन्तोष का अर्थ – प्रसन्नता, खुशी, आनन्द है, जैसे भी भली बुरी परिस्थिति सामने हो उसमें प्रसन्न रहना, संतोष है। अथवा शरीर से पूर्ण पुरुषार्थ द्वारा प्राप्त धन से अधिक की लालसा न करना, न्यूनाधिक की प्राप्ति पर शोक और हर्ष न करना।

iii. तप

भूख प्यास, शीत उष्ण, स्थान तथा आसन के कष्टों को सहन करना। तप का तात्पर्य 'कष्ट सहन' है।

iv. स्वाध्याय

आत्म ज्ञान की प्राप्ति के लिये नित्य नियम से पठन–पाठन स्वाध्याय कहा जाता है।

v. ईश्वर प्रणिधान

प्रणिधान माने हैं – धारण करना, स्थापित करना। ईश्वर प्रणिधान अर्थात् ईश्वर को धारण करना, ईश्वर को स्थापित करना। अथवा जितने भी कर्म बुद्धि, वाणी और शरीर से किये जाते हैं, और छोटी से छोटी क्रियामात्र को परमगुरु भगवान् अथवा ईश्वर को अर्पण करते जाना तथा उन कर्मो के फलों को भी भगवान् को अर्पण कर देना, ईश्वर प्रणिधान है।

3. आसन

''स्थिरसुखमासनम्''

'आसन' शरीर की वह स्थिति है जिसमें आप अपने शरीर और मन के साथ शान्त स्थिर एवंसुख से रह सकें।

4. प्राणायामायाम

"तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।" (योगदर्शन २/४६)

अर्थात् आसन की स्थिरता होने पर श्वास–प्रश्वास की स्वाभाविक गति का नियमन करना–रोकर सम कर देना "प्राणायाम" है।

5. प्रत्याहार

"स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरुपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।"

अपने–अपने विषयों के संग से रहित होने पर इन्द्रियों का चित्त के रूप में अवस्थित हो जाना प्रत्याहार है।

6. धारणा

"दशबन्धः चित्तस्य धारणा"

चित्त को किसी एक विशेष में स्थिर करने का नाम धारणा है।

7. ध्यान

"तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।"

ध्यान धारण शक्ति का प्रसार है।

8. समाधि

"तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरुप–शून्यमिव समाधिः।

केवल ध्येय मात्र की प्रतीति होती है चित्त का अपना स्वरूप शून्य हो जाता है वही (ध्यान ही) समाधि कहलाता है।

3.2 शरीर रचना

जीवधारी के शरीर की रचना पंच महाभूतो (आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी) से हुई है। इन पाँच तत्वों का प्रतिनिधित्व हमारे शरीर की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ करती हैं। अकाश का गुण है शब्द, और शब्द हम कान से सुनते है। वायु का गुण है स्पर्श, स्पर्श हम त्वचा से करते हैं। अग्नि का गुण

है प्रकाश, प्रकाश हम आँखों से देखते हैं। जल का गुण है स्वाद, स्वाद का अनुभव हमें जिह्वा से होता है। पृथ्वी का गुण है गंध, गंध का ज्ञान हमें नासिका से होता है। इसके अलावा पाँच कमेन्द्रियाँ है – (मुख, हाथ, पांव, लिंग और गुदा)

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ पाँच कर्मेन्द्रियां शरीर के संस्थान ग्रंथियाँ आदि 24 तत्वों से हमारे शरीर का संचालन होता है। इन सब पर शासन करने वाला है मन। मन पर शासन करने वाली बुद्धि। बुद्धि का शासक अहंकार और उसका स्वामी है जीवात्मा।

शरीर में सब संस्थानों का एक अपना मुख्य कार्य है जो उन अंगों को स्वस्थ रखने में सहायक होते है।

1.	अस्थि संस्थान	–	हड्डियाँ
2.	संधि–संस्थान	–	संधियाँ
3.	मांस संस्थान	–	मांसपेशियाँ
4.	रक्त और रक्त वाहक संस्थान	–	जैसे हृदय, धमनी और शिरा
5.	श्वासोच्छवास संस्थान	–	जिनसे हम साँस लेते है जैसे नासिका, टेंटुआ (गर्दन) फुफ्फुस आदि।
6.	पोषण संस्थान	–	मुख, दाँत, मेदा, (आमाशय)छोटी बड़ी आँते, यकृत।
7.	मूत्र वाहक संस्थान	–	गुर्दा, मूत्राशय आदि।
8.	वात या नाड़ी संस्थान	–	मस्तिष्क, नाड़ियाँ, बात सूत्र आदि।
9.	विशेष ज्ञानेन्द्रियाँ	–	चक्षु, कान, त्वचा, नासिका, और जिह्वा।
10.	उत्पादक संस्थान	–	अंड, शिश्न, योनि, गर्भाशय आदि।

इसके अतिरिक्त और भी कई प्रकार की ग्रंथियाँ है जो हमारे शरीर में कार्य करती है।

योगासनों का प्रभाव रीढ़, मांस पेशियों, रक्त संस्थान, नाड़ी संस्थान तथा पाचन यंत्रों पर पड़ता है। हृदय, फेफड़े तथा मस्तिष्क से इनका घनिष्ठ संबंध है इसलिए इन सब अंगों के कार्यो एवं रचना की संक्षिप्त व्याख्या, योगशिक्षा के भाग 2 में दी जा रही है।

मेरुदण्ड (रीढ़) – गर्दन, पीठ और कमर के बीच में रीढ़ होती हैं। इसे 26 भाग होते है। जो आपस में बंधे रहते हैं। हमारे शरीर के स्वास्थ्य और यौवन का संबंध इसी रीढ़ के स्वस्थ होने से है। रीढ़ में जितनी लचक रहेगी ये 26 मोहरें

साफ रहेंगे, इनके मुड़ने–तुड़ने में रुकावट नहीं होगी और हमारा स्वास्थ्य और यौवन भी बना रहेगा इन 26 अस्थियों में से 7 गर्दन में 12 पीठ में, 5 कमर में और शेष दो कमर के नीचे गुदाके पास होती है जो नौ के जोड़ से दो बनती है। इन्हीं के मध्य से सिर के पिछले भाग से सुषुम्ना नाड़ी निकल कर गुदाद्वार के पास तक आती है। जो सारे शरीर का नियंत्रण करती है।

मांसपेशियाँ – अस्थि पिंजर के भीतर शरीर के कार्य को चलाने के लिये कोमल अंग होते है। जो सौत्रिक तन्तुओं द्वारा इन अस्थियों से जुड़े रहते हैं। अस्थियों को ढकने तथा ग्रंथियों और अन्य कोमल अंगों की रक्षा के लिये मांसपेशियाँ होती हैं। जिनसे शरीर सुडौल बनता है। मांस का यह विशेष गुण है कि यह सिकुड़ कर मोटा और छोटा हो जाता है फिर अपनी पूर्व दशा को प्राप्त कर लेता है। मांस की सिकुड़ने को ''संकुचन'' और फैलने को ''प्रसार'' कहते है।

गतियाँ – हमारे शरीर में दो प्रकार की गतियाँ होती है। एक वे जो हमारी इच्छानुसार होती है जैसे – चलना, फिरना,बोलना, हाथ उठाना, भोजन चबाना आदि। क्योंकि ये गतियाँ इच्छा के आधीन होती है इस लिये इन्हें ऐच्छिक गति कहते हैं।

दूसरी गतियाँ वे हैं जो हमारे बस में नही है हम उनको अपनी इच्छा से रोक नहीं सकते और जो रुके उन्हें चला नहीं सकते उन्हें अनैच्छिक गतियाँ कहते हैं जैसे हृदय की धड़कन आंत्रगति, आंखों पर प्रकाशीय प्रभाववश गति आदि।

3.3 रक्त संस्थान फुफ्फुस और हृदय

हृदय

मनुष्य का हृदय उसकी बंद मुठ्ठी से बहुत कुछ मिलता जुलता है और वह छाती में बाईं तरफ फेफड़ों के बीच में स्थित है जिसे अक्सर तेज दौड़कर आने के बाद तथा घबराहट के समय तेज से धड़कता हुआ अनुभव किया जा सकता है। सारे शरीर को हृदय से रक्त देने तथा उसे वापस हृदय में लाने के लिये दो प्रकार की नलियाँ होती है जो सारे शरीर में फैली रहती है इनमें से कई तो बाल से भी बारीक होती है रक्त को ले जाने वाली ये नलियाँ ''धमनियाँ'' कहलाती है जबकि अशुद्ध रक्त को हृदय में वापस लाने वाली नालियाँ ''शिराएँ''

हृदय की दाईं ओर दायाँ, और बाईं ओर बायाँ फेफड़ा है। हृदय एक थैली के समान आवरण से ढका रहता हैं। जिसे ''हृदय कोश'' कहते हैं। हृदय मांस से निर्मित एक कोष्ठ है, जिसके भीतर रक्त भरा रहता है। यह भीतर से दो भागों में विभक्त रहता है। इन दोनों का आपस में कोई सम्बन्ध नहीं होता है प्रत्येक द्वार सौत्रिक तन्तु से निर्मित है। और वे नीचे तरफ को ही खुलते हैं।

आकृति 8 : हृदय की रचना

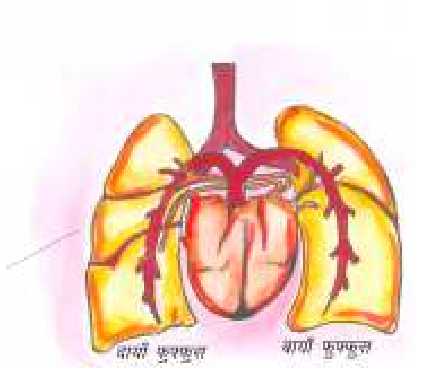

आकृति 9 : फेफड़ों में रक्त का शुद्धीकरण

इसलिए रक्त ऊपर के भाग से नीचे की ओर आ तो सकता है लेकिन ऊपर की ओर जा नहीं सकता इस प्रकार हृदय में चार भाग होते है। हृदय कभी एक सा नहीं रहता । वह कभी सिकुड़ता है तो कभी फैलता है। सिकुड़ने और फैलने से उसकी धारणा शक्ति घटती बढ़ती रहती है। फुफ्फुस रक्त को शुद्ध करने वाला अंग है इन अंगों में सम्पूर्ण दायाँ भाग अशुद्ध तथा बायाँ भाग शुद्ध रक्त का लेनदेन करता है। हृदय के कोष्ठ रक्त को आगे की ओर धकेल कर फैलने लगते है। और शीघ्र ही पूर्ण दशा को प्राप्त होते है। यह कार्य एक मिनट में 70 से 75 बार होता है। जिसे हम नाड़ी स्पन्दन भी कहते है। छोटे बच्चों में हृदय की घड़कन तेज और बुढ़ापा आने पर यह मन्द पड़ जाती हैं।

हृदय एक बार में 60 से 80 ग्राम रक्त पम्प करता है। हृदय एक मिनट में 5 से 8 लीटर के लगभग रक्त शरीर को भेजता है यह क्रम जीवन पर्यन्त चलता रहता है।

3.4 श्वासक्रम

वायु का नासिका द्वारा फेफड़ों में जाना और बाहर निकलना ''श्वासक्रम'' कहलाता है। श्वास सदा नाक से ही लेना चाहिये मुख से नहीं। नासिका में इस प्रकार के यंत्र हैं, जो श्वास को पहले छान कर गरम करते है। फिर उसे फेफड़ों में भेजते हैं। इस प्रकार कोई भी विकार नासिका द्वारा फेफड़ों में नहीं पहुँच सकता जबकि मुख में इस प्रकार के यंत्र नहीं है।

साधारण स्वस्थ मनुष्य एक मिनट में 13 से 20 बार तक श्वास लेता है। बचपन में यह संख्या अधिक होती है। शारीरिक परिश्रम से जैसे– व्यायाम, भागना, दौड़ना, खेलकूद आदि में यह संख्या अधिक हो जाती है। खड़े रहने में और दिन के समय में साँस जल्दी–जल्दी चलती है।

मस्तिष्क

योगासन एवं प्राणायाम की पूरी व्यवस्था मस्तिष्क तथा नाड़ी मंडल को स्वस्थ व शान्त करने की है। ताकि मस्तिष्क शरीर के अंगों को चला सके और उन पर नियंत्रण रख सके। मस्तिष्क दो भागों में बटा हुआ है। ''वृहद् मस्तिष्क'' और ''लघु मस्तिष्क''।

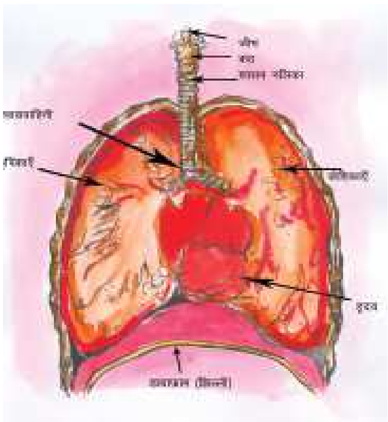

आकृति 6 : श्वसन–संस्थान

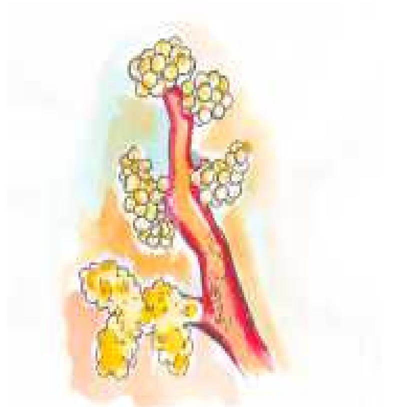

आकृति 7 : कूपिकाएँ और केशिकाएँ

मस्तिष्क सारे शरीर के कार्य को नाड़ी सूत्रों द्वारा चलाता है। ये नाड़ी सूत्र डोरी के समान परत होते है। सभी नाड़ियां एक समान नहीं होती है।

ये नाड़ियाँ मुख्यतः दो प्रकार की होती हैं जैसे कि वे नाड़ियाँ जिनका पेशियों की गति से सम्बन्ध होता है। ''चालक नाड़ियाँ'' कहलाती है। और वे नाड़ियाँ जिनका चेतना या संवेदन से सम्बन्ध है, संवेदनिक नाड़ियाँ कहलाती है। लेकिन कुछ नाड़ियाँ मिश्रित रहती हैं।

सुषुम्ना की रचना

योग में सुषुम्ना का बड़ा नाम आता है। चक्रों का होना भी इसी पर माना गयाहै। इन चक्रों के खुलने से व्यक्ति पूरी तरह तनाव मुक्त निरोगी व विश्राम की स्थिति में रहता है। सुषुम्ना नाड़ी मंडल का वह भाग है जो कपाल के महाछिद्र से प्रारम्भ होकर रीढ़ में से उसके आखिरी मोहरे से ऊपर वाले मोहरे तक आता है। सुषुम्ना कुछ बेलनाकार और रस्सी की सी होती है। इसका पिछला भाग मध्य रेखा में दबा रहता है। इन नाड़ियों के बाएँ भाग को ''इड़ानाड़ी'' मंडल तथा दाएँ भाग को ''पिंगला नाड़ी'' मंडल कहते हैं। इनका सीधा संबंध नासिका की इड़ा (चन्द्र नाड़ी) पिंगला (सूर्य नाड़ी) से होता है।

पाचन तंत्र

शरीर में अनेक क्रियाएँ चलती रहती है। जिसके लिये ऊर्जा की आवश्यकता होती है। तथा क्रियाओं के संचालन में कई कोशिकाएँ या ऊतक टूट–फूट जाते है। अतः इनके निर्माण व ऊर्जा की पूर्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है।

आहार के निम्न घटक होते हैं।

1. कार्बोहाइड्रेट
2. प्रोट्रीन
3. वसा
4. विटामिन
5. लवण
6. पानी

हम इन घटकों को भोजन के रूप में करते है। उसे उसी रूप में अवशोषित नहीं किया जाता हैं। अतः भोजन को पाचन की आवश्यकता होती है।

पाचन – जटिल यौगिक को सरल यौगिक में बदलनेकी क्रिया पाचन कहलाता है। हमारे शरीर में भोजन के लिये 10 मी. लम्बी एक माँसल नलिका होती है। जिसे आहार नाल कहते है। इसके निम्न भाग होते है।

मुह ग्रसिका – ग्रास नलिका आमाशय, ग्रहणी, छोटी आंत, बड़ी आंत मलद्वार

मुँह – यह पाचन प्रणाली का मुख्य द्वार है इसमें एक प्रकार का रस स्त्रवित होता है जो मुँह को हमेशा तर रखता है मुँह में भोजन को चबाने की क्रिया सम्पन्न होती है।

ग्रसनी– मुख गुहा के पीछे का कीप की तरह का भाग होता है। यह 5 से.मी. लम्बी होती है। यह ग्रसनी के बाद 26 से.मी. लम्बी नली होती है। जो ग्रीवा से होती हुई कशेरुका तक स्थित है।

आमाशय– ग्रास नलिका का अंतिम भाग एक फूली हुई थैली में खुलता है। जिसे अमाशय कहते हैं। यह आहारनाल की सबसे बड़ी गुहा है यहां भोजन का पाचन होता है।यह 26 से. मी. लम्बा तथा चौड़ाई 10 से. मी. होता है।

ग्रहणी– यह आमाशय के दूसरे छोर से शुरु होता है। यह 52 से.मी. लम्बा अर्ध चंद्राकार होता है।

छोटी आँत – यह 6 1/2 मी. लम्बी 2 से.मी. चौड़ी नलिका होती है। इसकी लम्बी नलिका उदर

में कुण्डली के समान लिपटी रहती है।

बड़ी आँत – यह पाचन प्रणाली का अंतिम भाग होता है जो छोटी आँत को चारों ओर से घेरे रहती है। इसकी लम्बाई 2 मी. तथा चौड़ाई 7से.मी. होती है। बड़ी आँत का अंतिम भाग घूमकर नीचे मलाशय में आता है।

गुदाद्वार – आहार नली का अंतिम छोर शरीर के बाहर की ओर एक द्वार के रूप में खुलता हैं। जिससे मल विसर्जित होता है। वह मलद्वार कहलाता है।

ग्रहणी क्षत
(DUODENAL ULCER)

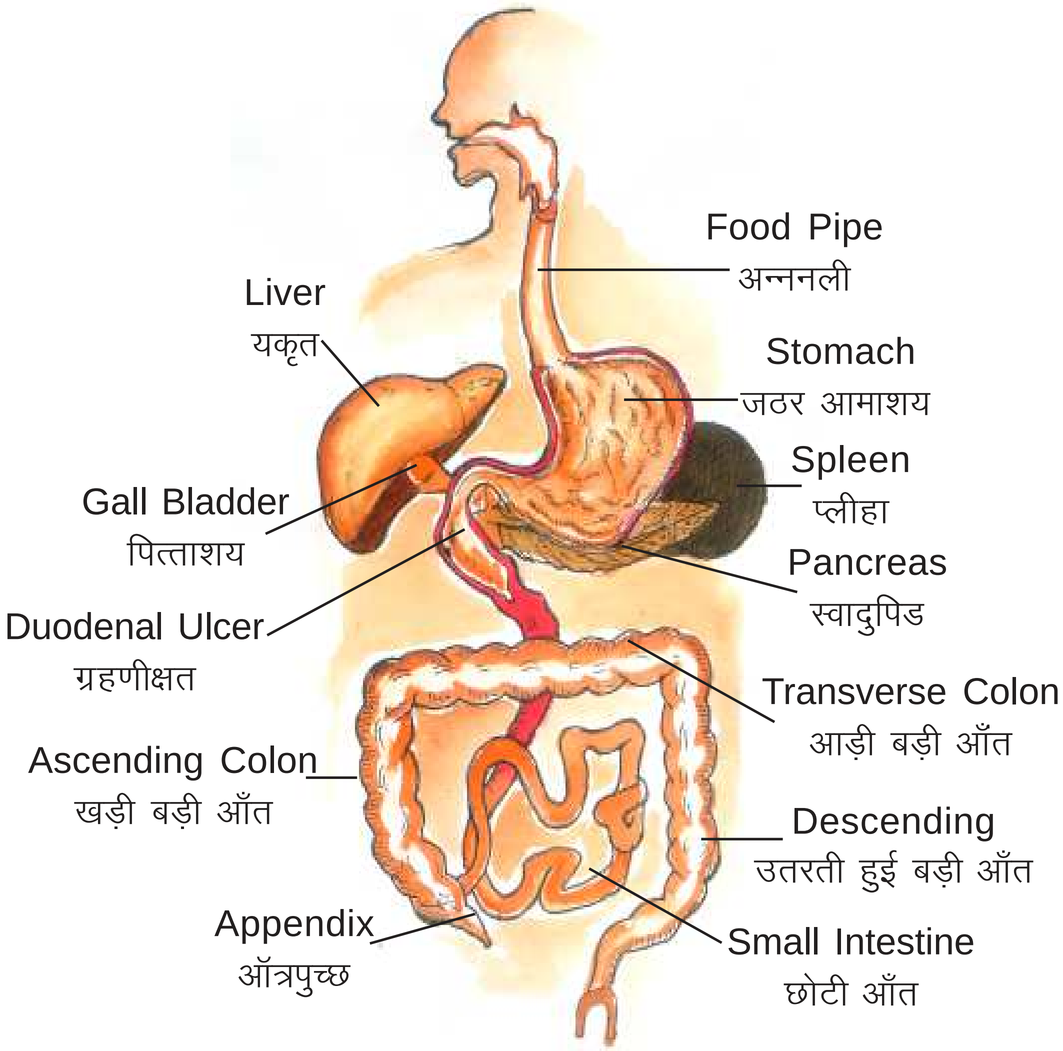

अध्याय : चार

4.1 आसन का तात्पर्य और प्रकार

आसन का तात्पर्य :– '' आसन शरीर की वह स्थिति हैं जिसमें आप अपने शरीर और मन को शान्त स्थिर एवं सुख से रख सकें।

'' स्थिरसुखमासनम्''

सुख पूर्वक बिना कष्ट के एक ही स्थिति में अधिक से अधिक समय तक बैठने की क्षमता को आसन कहते है।

योग शास्त्रों में परम्परा के अनुसार चौरासी लाख आसन हैं ये जीव जन्तु के नामों पर आधारित है। इन आसनों के बारे में कोई नहीं जानता इसलिए चौरासी आसनों को ही प्रमुख माना गया है। और अब कालान्तर में बत्तीस आसन ही प्रसिद्ध हैं।

आसनों को अभ्यास शारीरिक, मानसिक एवं अध्यात्मिक रूप से स्वास्थ्य लाभ एवं उपचार के लिए किया जाता है।

आसनों को दो समूहों में बाँटा गया है:–

1. गतिशील आसन
2. स्थिर आसन

1. गतिशील आसन:– वे आसन जिनमें शरीर शक्ति के साथ गतिशील रहता है।

2. स्थिर आसन :– वे आसन जिनमें अभ्यास को शरीर में बहुत ही कम या बिना गति के किया जाता है।

आसनों को विभिन्न रूपों में बाँटा गया है। जैसे प्रारंभिक समूह के आसन '' वायु निरोधक अभ्यास '' शक्ति बंध के आसन, बैठकर, खड़े होकर, झुककर, मुड़कर, लेटकर, ध्यान के आसनों के रूप में किये जाते है।

''आसनानि समस्तानि यावन्तो जीवजन्तवः।

चतुरशीतिलक्षाणि शिवेन कथितं पुरा ।।

तेषां मध्ये विशिष्टानि षोडशेन शतं कृतम्

तेषां मध्ये मर्त्यलोके द्वात्रिंशदासनं शुभम्

4.2 स्वस्तिकासन

स्थिति – स्वच्छ कम्बल या वस्त्र पर पैर फैलाकर बैठें।

विधि– बाएँ पैर को घुटने से मोड़कर दाहिनी जंघा और पिंडली के बीच इस प्रकार स्थापित करें कि बाएँ पैर का तल छिप जाए तत्पश्चात् दाहिने पैर के पंजे और तल को बाएँ पैर के नीचे से जांघ और पिंडली के मध्य स्थापित करने से स्वस्तिक आसन बन जाता है। ध्यान मुद्रा में बैठें तथा रीढ़ सीधी कर श्वास खींचकर यथाशक्ति रोकें। इस क्रिया को पैर बदलकर भी करें।

चित्र क्र. 4.1

लाभ–

1. पैरो का दर्द, पसीना आना, दूर होता है।
2. पैरों का गर्म या ठण्डापन दूर होता है। ध्यान हेतु श्रेष्ठ आसन है।

4.3 भद्रासन

विधि–

1. वज्रासन में बैठ जाइए।
2. घुटनों को जितना सम्भव हो सके, दूर–दूर कर लीजिए।
3. पैरों की अंगुलियों का संपर्क जमीन से बना रहें।
4. अब पंजों को इतना अलग करिए कि उनके बीच में नितम्ब फर्श पर जम जाएँ।
5. बिना किसी तनाव के घुटनों का फासला और बढ़ाइए। हाथों को

चित्र क्र. 4.2

घुटनों पर रखिए हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

6. जब शरीर सुख की स्थिति में हो तब (नासिकाग्र दृष्टि) दृष्टि और मन को नाक के अग्र भाग पर स्थिर कीजिए।

लाभ– मूलाधार चक्र क्रियाशील होता है।

4.4 गोमुखासन

विधि–

1. दोनों पैर सामने फैलाकर बैठें। बाएँ पैर को मोड़कर एड़ी को दाएँ नितम्ब के पास रखें।
2. दाएँ पैर को मोड़कर बाएँ पैर के ऊपर इस प्रकार रखें कि दोनों घुटनें एक दूसरे के ऊपर हो जाएँ।
3. दाएँ हाथ को ऊपर उठाकर पीठ की ओर मोड़िए तथा बाएँ हाथ को पीठ के पीछे नीचे से लाकर दाएँ हाथ को पकड़िए। गर्दन व कमर सीधी रहे।
4. एक ओर से लगभग एक मिनट तक करने के पश्चात् दूसरी ओर से इसी प्रकार करें।

चित्र क्र. 4.3

टीप– जिस ओर का पैर ऊपर रखा जाए उसी ओर का (दायाँ/बायाँ) हाथ ऊपर रखें ।

लाभ–

1. अण्डकोषवृद्धि एवं आन्त्रवृद्धि में विशेष लाभप्रद है।
2. धातु रोग, बहुमूत्र एवं स्त्री रोगों में लाभकारी है।
3. यकृत, गुर्दे एवं वक्षस्थल को बल देता है। संधिवात, गठिया को दूर करता है।

4.5 गोरक्षासन

विधि–

1. दोनों पैरों की एड़ी तथा पंजे आपस में मिलाकर सामने रखिए।
2. अब सीवनी नाड़ी (गुदा एवं मूत्रेन्द्रिय के मध्य) को एड़ियों पर रखते हुये उस पर बैठ जाइए। दोनों घुटनें भूमि पर टिके हुए हों। हाथों को ज्ञानमुद्रा की स्थिति में घुटनों पर रखें।

चित्र क्र. 4.4

लाभ–

1. मांस पेशियों में रक्त संचार ठीक रूप से होकर वे स्वस्थ होती है।
2. मूलबंध को स्वाभाविक रूप से लगाने और ब्रह्मचर्य कायम रखने में यह आसन सहायक है। इंद्रियों की चंचलता समाप्त कर मन में शान्ति प्रदान करता है। इसलिए इसका नाम गोरक्षासन है।

4.6 अर्द्धमत्स्येन्द्रासन

विधि–

1. दोनों पैर सामने फैलाकर बैंठें। बाएँ पैर को मोड़कर एड़ी को नितम्ब के पास लगाएँ।
2. बाएँ पैर को दाएँ पैर के घुटनें के पास बाहर की ओर भूमि पर रखें।
3. बाएँ हाथ को दाएँ घुटने के समीप बाहर की ओर सीधा रखते हुये दाएँ पैर के पंजे को पकड़ें।
4. दाएँ हाथ को पीठ के पीछे से घुमाकर पीछे की ओर देखें।

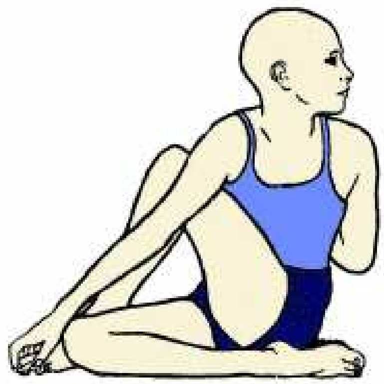

चित्र क्र. 4.5

5. इसी प्रकार दूसरी ओर से इस आसन को करें।

लाभ–

1. मधुमेह एवं कमर दर्द में लाभकारी है।
2. पृष्ठ देश की सभी नस–नाड़ियों में (जो मेरुदण्ड के इर्द–गिर्द फैली हुई है) रक्त संचार को सुचारु रूप से चलाता है।
3. उदर विकारों को दूर कर आँखों को बल प्रदान करता है।

4.7 योगमुद्रासन

स्थिति– भूमि पर पैर सामने फैलाकर बैठ जाइए।

विधि–

1. बाएँ पैर को उठाकर दाईं जांघ पर इस प्रकार लाइए कि बाएँ पैर की एड़ी नाभि के नीचे आए।
2. दाएँ पैर को उठाकर इस तरह लाइए कि बाएँ पैर की एड़ी के साथ नाभि के नीचे मिल जाए।

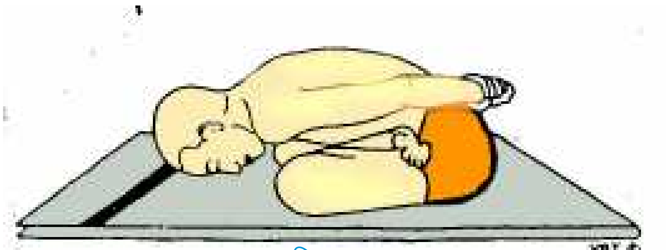

चित्र क्र. 4.6

3. दोनों हाथ पीछे ले जाकर बाएँ हाथ की कलाई को दाहिने हाथ से पकड़े। फिर श्वास छोड़ते हुए सामने की ओर झुकते हुए नाक को जमीन से लगाने का प्रयास करें। हाथ बदलकर किया करें। पुनः पैर बदलकर पुनरावृत्ति करें।

लाभ– चेहरा सुंदर, स्वभाव विनम्र व मन एकाग्र होता है।

4.8 उदराकर्षण या शंखासन

स्थिति– काग आसन में बैठ जाइए।

विधि–

1. हाथों को घुटनों पर रखते हुये पंजों के बल उकडू (कागासन) बैठ जाइए। पैरों में लगभग एक सवाफुट का अन्तर होना चाहिए।
2. श्वास अन्दर भरते हुये दाएँ घुटने को बाएँ पैर के पंजे के पास टिकाइए तथा बाएँ घुटनें को दाईं तरफ झुकाइए। गर्दन को बाईं ओर से पीछे की ओर घुमाइएँ व पीछे देखिए। थोड़े समय रुकने के पश्चात् श्वास छोड़ते हुए बीच में आ

चित्र क्र. 4.7

जाइए। इसी प्रकार दूसरी ओर से करें।

लाभ–

1. यह शंखप्रक्षालन की एक क्रिया है।
2. सभी प्रकार के उदर रोग यथा कब्ज, मन्दाग्नि, गैस, अम्लपित्त, खट्टी–खट्टी डकारें का आना एवं बवासीर आदि निश्चित रूप से दूर होते हैं।
3. आँत, गुर्दे, अग्नाशय तथा तिल्ली संबंधी सभी रोगों में लाभप्रद है।

4.9 आकर्ण धनुरासन

विधि–

1. दाहिने पैर को मोड़कर बाएँ पैर पर रखिए।
2. बाएँ हाथ से दाहिने पैर का अंगूठा तथा दाएँ हाथ से बाएँ पैर का अंगूठा पकड़िए।
3. श्वास अन्दर भर कर दाएँ पैर को बाएँ कान के पास लाइए। कुछ समय इस स्थिति में रुक कर पुनः दण्डासन की स्थिति में आ जाइए इसी तरह दूसरे पैर से करें।

चित्र क्र. 4.8

4.10 विपरीतकरणी आसन

यह आसन सर्वांगासन की भांति ही है। यह सर्वांगासन से सरल है। अतः प्रारंभिक अवस्था में इसका अभ्यास करना चाहिये।

जिनकी गर्दन की मांसपेशियाँ कठोर हैं तथा जो धड़ को सीधा नहीं कर सकते, उन्हें इस आसन का अभ्यास करना चाहिये।

विधि–

1. पीठ के बल सीधे लेट जाइए।
2. दोनों हाथ जमीन पर बाजू में तथा हथेलियाँ नीचे की ओर खुली रहें।
3. हाथों का सहारा देकर दोनों पैरों को

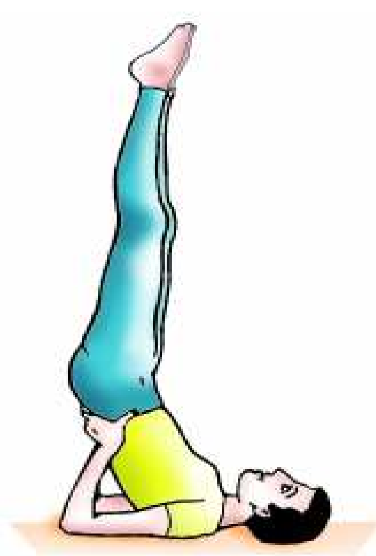

चित्र क्र. 4.9

धीरे–धीरे ऊपर उठाइए।

4. हाथों को कोहनियों से मोड़िए तथा हथेलियों से दबाव डालकर पीठ को 45 अंश के कोण पर ही रखें।

5. ठुड्डी का स्पर्श छाती से नहीं किया जाता है।

लाभ–

1. जठराग्नि तेज होती है।
2. भूख लगती है, शरीर स्वस्थ रहता है।
3. चेहरा तेजस्वी रहता है बाल जल्दी सफेद नहीं होते है।
4. दिमागी ताकत बढ़ती है।
5. पैरों की सूजन, हाथी पांव की प्रांरभिक सूजन ठीक हो जाता है।
6. कण्ठमाला, फोड़े, मुँहासे, खाज आदि रक्त विकार तथा अन्य रोगों से मुक्ति मिलती है।

4.11 सर्वांगासन

स्थिति – दरी या कम्बल बिछाकर पीठ के बल लेट जाएँ।

विधि– दोनों पैरों को धीरे–धीरे उठाकर 90 अंश तक लाएँ बाहों और कोहनियों की सहायता से शरीर के निचले भाग को इतना ऊपर ले जाएँ कि वह कंधो पर सीधा खड़ा हो जाए पीठ को हाथों का सहारा दें हाथों के सहारे से पीठ को दबाएँ कण्ठ से ठुड्ठी लगाकर यथाशक्ति रखें। फिर धीरे–धीरे पूर्व अवस्था में पहले पीठ को जमीन से टिकाएँ फिर पैरों को भी धीरे–धीरे सीधा करें।

चित्र क्र. 4.10

लाभ–

1. थायराइड को सक्रिय एवं स्वस्थ बनाता है।
2. मोटापा, दुर्बलता, कद वृद्धि की कमी एवं थकानादि विकार दूर होते हैं।
3. एड्रिनल, शुक्र ग्रन्थि एवं डिम्ब ग्रन्थियों को सबल बनाता है।

4.12 हलासन

स्थिति– भूमि पर पीठ के बल लेट जाइए। दोनों पैर आपस में मिले हुए और शरीर से चिपकाकर हाथ बगल में रखें। दोनों पैरों को एक साथ उठाकर श्वास छोड़ते हुए सिर को पीछे जाने दें। पैरों को सिर के पीछे भूमि पर टिका दें। श्वास की गति सामान्य रहेगी। धीरे–धीरे वापस आएँ।

चित्र क्र. 4.11

समय– 30 सेकेण्ड

लाभ–

1. मेरुदण्ड को स्वस्थ एवं लचीला बनाता है।
2. निम्न रक्तचाप (लो ब्लड प्रेशर) को दूर करता है।
3. रक्त संचार (ब्लड सर्कुलेशन) ठीक करता है।
4. कमर, पेट का मोटापा दूर होता है। शरीर की दुर्गन्ध दूर होती है, मुख की कान्ति एवं नेत्रों की ज्योति बढ़ती है।

आवश्यक निर्देश :–

1. पूर्व कक्षाओं के आसनों का अभ्यास आवश्यकतानुसार करायें:– ताड़ासन, तिर्यक ताड़ासन, कटिचक्रासन, पादहस्तासन, कोणासन, द्विकोणासन, त्रिकोणासन, गरूड़ासन, वज्रासन, मार्जारीआसन, उष्ट्रासन, सुप्तवज्रासन, पश्चिमोत्तानासन, नौकासन, चक्रासन, मत्स्यासन, भूजंगासन, शलभासन, धनुरासन आदि।
2. पवनमुक्तासन भाग 1 से 20 तक ।
3. शवासन का अभ्यास आसन के अन्त में कराएँ।

अध्याय : पाँच

सूर्य नमस्कार

सूर्य नमस्कार बारह आसनों का योग है इसमें शरीर के सम्पूर्ण अंगों का आसन होता है इससे आत्म विश्वास, आत्मबल की वृद्धि एवं शरीर के समस्त विकार दूर हो जाते हैं। सूर्य से प्रार्थना करें कि हे सूर्य भगवान! हमारे अन्दर आत्मबल व मनोबल की वृद्धि हो इस भाव से सूर्य का ध्यान करें।

ओ३म् –तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।

ओ३म् – वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।।

ओ३म् – बलमसि बलं मयि धेहि।

ओ३म् – ओजोऽस्योजो मयि धेहि।।

ओ३म् – मन्युरसि मर्न्युमयि धेहि।

ओ३म् – सहोऽसि सहो मयि धेहि।।

प्रथम अवस्था (प्रणाम आसन)

ओ३म् मित्राय नमः

विधि– कम्बल या दरी पर पूर्व की ओर मुख करके खड़े हो जाएँ। पैरों की एड़ी व पंजे मिले हों, दोनों हाथों को जोड़कर प्रणाम की मुद्रा में छाती पर रखें।

द्वितीय अवस्था (हस्तउत्तानासन)

ओ३म् रवये नमः

विधि – दोनों नासिका रन्ध्रों से श्वास भरते हुए सामने से दोनों हाथों को ऊपर उठाते हुए गर्दन सहित पीछे ले जाएँ व ऊपर देखें, सिर दोनों हाथों के मध्य में रखें।

तृतीय अवस्था (पादहस्तासन)

ओ३म् सूर्याय नमः

विधि– दोनों नासिका रन्ध्रों से धीरे–धीरे श्वास छोड़ते हुए सामने की ओर कमर से झुके, हथेलियाँ पैरों के दोनों ओर भूमि को स्पर्श करने का प्रयास करें एवं सिर को घुटने पर लगाने का प्रयास करें। ध्यान रहे घुटने न मुड़ने पाए।

चतुर्थ अवस्था (अश्वसंचालनासन)

ओ३म् भानवे नमः

विधि– श्वास खीचकर बाएँ पैर को यथा शक्ति पीछे ले जाएँ और पंजे को भूमि पर स्थापित करें, दाहिना घुटना ऊपर उठाकर सीने को तानें सामने देखते हुए श्वास को सामान्य रखें अश्व की भांति शरीर को रखें। ध्यान रहे दाहिना पैर व दोनों हाथ समानान्तर अवस्था में हो।

पंचम अवस्था (पर्वतासन)

ओ३म् खगाय नमः

विधि– धीरे से श्वास लेते हुए आगे वाले पैर को पीछे ले जाएँ तथा पैरों के अंगुलियों व हाथों में दबाव देते हुए नितम्बों को ऊपर उठाए तथा दृष्टि नाभि पर रखें।

षष्ठम अवस्था (अष्टांगनमन आसन)

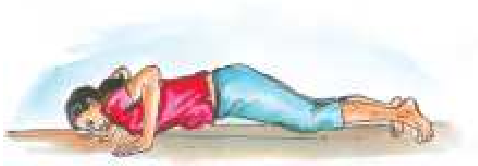

ओ३म् पूष्णे नमः

विधि– शरीर के आठ अंगों को धरती पर स्पर्श कराएँ पहले दोनों घुटनों, छाती दोनों हाथ ठुड्ठी व पैर से जमीन को स्पर्श करें। श्वासप्रश्वास सामान्य रखें।

सप्तम अवस्था (भुजंगासन)

ओ३म् हिरण्यगर्भाय नमः

विधि – जमीन पर पेट के सहारे लेट जाएँ व दोनों हाथों के सहारे श्वास अन्दर भरते हुए धीरे–धीरे छाती के भाग को नाभि तक ऊपर उठाएँ तिलक के स्थान को देखने का प्रयास करें।

अष्टम अवस्था (पर्वतासन)

ओ३म् मरीचये नमः

विधि– श्वास खीचतें हुए दोनों पैरों के पंजों के सहारे झुक जाएँ व कमर के भाग को पर्वत की भांति ऊपर उठा लें व नाभि को देखने का प्रयास करें।

नवम अवस्था (अश्वसंचालनासन)

ओ३म् आदित्याय नमः

विधि– चतुर्थ अवस्था की तरह एक पैर को दोनों हाथों के मध्य में ले आएँ व घुटनों को मोड़कर छाती को घुटनों पर लगाकर ऊपर की ओर देखने का प्रयास करें दूसरे पैर को यथा सामर्थ्य घुटने जमीन पर स्पर्श करते हुए स्थित रहें।

दशम् अवस्था (पादहस्तासन)

ओ३म् सवित्रे नमः

विधि– तृतीय अवस्था की भांति श्वास लेते हुए पीछे पैर को आगे की ओर ले जाएँ। दोनों हथेलियों से जमीन स्पर्श करते हुए सिर को घुटने पर यथा सम्भव स्पर्श करने का प्रयास करें।

एकादश अवस्था (हस्तउत्तानासन)

ओ३म् अर्काय नमः

विधि– द्वितीय अवस्था की तरह श्वास अन्दर भरते हुए धीरे–धीरे कमर से शरीर को सीधा करें और हाथों को गर्दन सहित यथा सम्भव ऊपर से पीछे ले जाने का प्रयास करें।

द्वादश अवस्था (प्रणाम आसन)

ओ३म् भास्कराय नमः

विधि– श्वास छोड़ते हुए दोनों हाथों को जोड़ते हुए हृदय स्थल पर लाएँ व सूर्य भगवान को धन्यवाद दें।

लाभ– सूर्य नमस्कार यौगिक व्यायामों में सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि इस एक व्यायाम से मनुष्य आसन मुद्रा और प्राणायाम के लाभ से लाभान्वित होता है। फेफड़ों के अन्दर शुद्ध प्राणवायु का प्रचुर मात्रा में संचार होनेके कारण अभ्यासी का शरीर सूर्य के समान कान्तिवान बन जाता है। शरीर के सभी अंग इससे प्रभावित होते हैं। फलस्वरूप सीना चौड़ा व पुष्ट होता है, भुजाएँ सुन्दर, कमर पतली, जंघा पिण्डली और पैर अतिसुन्दर हो जाते हैं। चर्म सम्बन्धी बीमारियाँ दूर होती है, जठराग्नि को प्रदीप्त कर उदर सम्बन्धी विकारों का विनाश कर उदर की अनावश्यक चर्बी को कम कर देता है। मेरुदण्ड और कमर लचीली हो जाती है। आलस्य और अतिनिद्रा दूर होती है।

सावधानी– हार्निया के रोगी इसे न करें।

उच्चरक्त चाप के रोगी न करें।

प्राणायाम

प्राण का अर्थ ऊर्जा अथवा जीवनी शक्ति है तथा आयाम का तात्पर्य ऊर्जा को नियंत्रित करना है। इस नाड़ी शोधन प्राणायाम के अर्थ में प्राणायाम का तात्पर्य एक ऐसी क्रिया से है जिसके द्वारा प्राण का प्रसार विस्तार किया जाता है तथा उसे नियंत्रण में भी रखा जाता है।

चित्र क्र. 5.2

नाड़ी शोधन प्राणायाम

किसी भी ध्यानात्मक आसन में बैठें। पीठ कमर गर्दन सिर लंबवत् सीधा रखें। पैरों के घुटने भूमि पर टिके रहें।

प्रथम चरण मे बायाँ हाथ बाएँ घुटने पर रखें। दाएँ हाथ की तर्जनी और मध्यमा को भ्रूमध्य पर रखें। अंगूठे से दाहिना तथा अनामिका से आवश्यकतानुसार बाईं नासिका रंध्र बंद करें। बाईं नासिका से पूरक करें तथा पुनः उसी से रेचक करें दाहिना स्वर बंद रहेगा। इस प्रकार इसे पाँच बार करें। पुनः ऐसा ही दाईं नासिका रंध्र से करें। बाईं नासिका बंद रखें। एक नासिका रंध्र से एक बार श्वास लेने और छोड़ने को एक चक्र कहा जाता है।

द्वितीय चरण में दाईं नासिका रंध्र को अंगूठे से बंद करें, बाईं से पूरक करें। अब बाईं नासिका रेचक रंध्र को चौथी अंगुली से बंद कर दाईं से रेचक करें। पुनः दाईं से पूरक कर बाईं से रेचक करें। यह एक चक्र पूरा हुआ।

लाभ–

1. नाड़ी शोधन प्राणायाम से मन शान्त और प्रसन्न रहता है।
2. साधक आनन्द और सुरक्षा का अनुभव करता है।
3. इड़ा और पिंगला नाड़ियों में प्राण का प्रवाह समान होता है तथा इन से विषाक्त तत्व विलग होते हैं।
4. नाड़ियाँ शुद्ध होती है।

अनुलोम–विलोम प्राणायाम

विधि– ध्यान के किसी भी आसन में बैठे। बाईं नासिका से श्वास धीरे–धीरे भीतर खीचें श्वास यथाशक्ति रोकने (कुम्भक) के पश्चात दाएँ स्वर से श्वास छोड़ दें। पुनः दाईं नसिका से श्वास खींचे यथाशक्ति श्वास रुकने (कुम्भक) के बाद बाएँ स्वर से श्वास धीरे–धीरे निकाल दें।

जिस स्वर से श्वास छोड़े उसी स्वर से पुनः श्वास लें और यथाशक्ति भीतर रोककर रखें। क्रिया सावधानी पूर्वक करें, जल्दबाजी न करें।

लाभ –
1. शरीर की सम्पूर्ण नस नाड़ियाँ शुद्ध होती है।
2. शरीर तेजस्वी व फूर्तीला बनता है।
3. भूख बढ़ती है।
4. रक्त शुद्ध होता है।

सावधानी–
1. नाक पर अंगुलियों को रखते समय उसे इतना न दबाएँ कि नाक की स्थिति टेढ़ी हो जाए।
2. श्वास की गति सहज ही रहे।
3. कुम्भक को अधिक समय तक न करें।

शीतली प्राणायाम

किसी भी आराम दायक आसन में बैठिए घुटने जमीन पर टिके हो तथा पीठ कमर गर्दन और सिर सीधे रहें। हाथों को घुटनों पर रखे। जीभ अधिक से अधिक बाहर निकाल कर उसे नाली की तरह मोड़ लीजिए। मुड़ी हुई जीभ तथा मुख से श्वास खींचिए मानों आप हवा को चूसते हुए पेट के भीतर ले जा रहे हैं। जीभ को सामान्य स्थिति में लाकर मुख के भीतर ले जाइए तथा मुख बंद कर धीरे–धीरे नासिका से श्वास छोड़ें।

चित्र क्र. 5.3

लाभ–
1. इस प्राणायाम से रक्त की अशुद्धता दूर होती है।
2. उच्च रक्त चाप में पर्याप्त राहत मिलती है।
3. मानसिक आत्मिक तथा मांसपेशियों के तनाव दूर होते हैं।
4. गहरी शान्ति का अनुभव होता है।
5. इस प्राणायाम से प्यास की तीव्रता में भी कमी आती है।

सावधानी– इस प्राणायाम का अभ्यास शीतकाल में न करें

शीतकारी प्राणायाम

किसी भी आरामदायक आसन में सीधे बैठें। घुटने जमीन से लगाए रखें। जीभ को पलटकर तालू से सटा लीजिए। दाँतों को भींचकर होठों को अधिक से अधिक खुला रखें। दाँतों के बीच से मुख द्वारा श्वास लीजिए। होठों को बंदकर धीरे–धीरे नाक से श्वास को छोड़िए।

लाभ – इसके लाभ और प्रभाव शीतली प्राणायाम के समान है।

चित्र क्र. 5.4

भस्त्रिका प्राणायाम

विधि– ध्यान के किसी सुखद आसन में बैठें। मेरुदण्ड सीधे रहे। नेत्र बंद और शरीर शिथिल रखें।

प्रथम अवस्था–

बाएँ हाथ को बाएँ घुटने पर रखें दाहिने हाथ को मस्तक पर भ्रूमध्य के पास रखें। प्रथम एवं द्वितीय अंगुली को कपाल पर रखें अंगूठा दाएँ नथुने के बाजू में तथा तीसरी अंगुली को बाएँ नथुने के बगल में रखें। अंगूठे से दाहिने नथुनें को बंद करें बाएँ नथुने से जल्दी–जल्दी 20 बार श्वास लें। यह क्रिया उदर के फूलने एवं पिचकाने के साथ जल्दी–जल्दी लयबद्ध हो, फिर एक पूरक कर दोनों नथुनों को अुगूठे एवं तृतीय अंगुली से बंद करे लें जालंधर एव मूलबंध या कोई एक का अभ्यास कर क्षमता अनुसार रुककर बंधों को शिथिल कर रेचक करें। दाहिनी ओर से ठीक यही क्रिया दुहराएँ यह एक आवृति है इसी प्रकार तीन आवृति करें।

द्वितीय अवस्था–

पूर्व स्थिति अनुसार बैठकर दोनों हाथों को दोनों घुटनों पर रखें, अब दोनों नासाछिद्रों से एक ही साथ 20 बार लय बद्ध श्वसन करें। दीर्घ पूरक कर श्वास रोकिए जालंधर एवं मूलबंध या कोई एक का अभ्यास करें। क्षमता अनुसार समय पश्चात बंधों को शिथिल कर रेचक करें। इसकी भी तीन आवृति करें।

लाभ– 1. फेफड़े मजबूत बनते हैं। श्वास रोग, क्षय रोग में लाभकारी होता है।

2. गले के सभी प्रकार के जलन एवं पुराने कफ को दूर करता है।

3. जठराग्नि को प्रदीप्तकर पाचन शक्ति बढ़ाता है।

4. मन को स्थिरता एवं शान्ति प्रदान करता है।

विशेष– इस प्राणायाम में फेफड़ों का उपयोग लोहार की धौकनी की तरह होता है।

सावधानी– गर्मी की अधिकता में इसे न करें। दुर्बल प्रकृति के व्यक्ति/बच्चे इसे न करें या धीरे–धीरे करें। बलपूर्वक श्वसन क्रिया न करें। हृदय रोगी व उच्च रक्तचाप वाले इसे न करें या कुशल योग निर्देशक की सलाह पर करें।

कपालभाति प्राणायाम

विधि– इस प्राणायाम का शाब्दिक अर्थ है मस्तिष्क की आभा को बढ़ाने वाली क्रिया। इस प्राणायाम की स्थिति ठीक भस्त्रिका के ही समान होती है परन्तु इस प्राणायाम में मात्र रेचक अर्थात श्वास की शक्ति पूर्वक बाहर छोड़ने में जोर दिया जाता है। श्वास लेने में जोर न देकर छोड़ने में ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इस प्राणायाम में पेट के पिचकाने और फुलाने की क्रिया पर जोर दिया जाता है। इस प्राणायाम को यथाशक्ति अधिक से अधिक करें।

लाभ–

1. हृदय, फेफड़े एवं मस्तिष्क के रोग दूर होते हैं।

2. कफ, दमा, श्वास रोगों में लाभदायक है।

3. मोटापा, मधुमेह, कब्ज एवं अम्लपित्त के रोग दूर होते हैं।

4. मस्तिष्क एवं मुखमण्डल का ओज बढ़ता है।

भ्रामरी प्राणायाम्

स्थिति– किसी ध्यान के आसन में बैठें।

विधि– आसन में बैठकर रीढ़ को सीधा कर हाथों को घुटनों पर रखें। तर्जनी को कान के अन्दर डाले। दोनों नाक के नथुनों से श्वास को धीरे–धीरे (ॐ) शब्द का उच्चारण करने के पश्चात् मधुर आवाज में कण्ठ से भौंरे के समान गुंजन करें। नाक से श्वास को धीरे–धीरे बाहर छोड़ दें। पूरा श्वास निकाल देने के पश्चात्

चित्र क्र. 5.5

भ्रमर की मधुर आवाज अपने आप बंद होगी। इस प्राणायाम को 3–5 बार करें।

लाभ–

1. मन की चंचलता दूर होती है एवं मन एकाग्र होता है।
2. उच्च रक्तचाप पर नियंत्रण करता है।
3. हृदय रोग के लिए फायदेमंद है।
4. वाणी तथा स्वर में मधुरता आती है।
5. पेट के विकारों का शमन करती है।

अध्याय – छः

6.1 मुद्राएँ

1. ज्ञानमुद्रा

विधि– किसी भी आसन में बैठकर करें। तर्जनी अँगुली को मोड़कर अंगूठे के मध्य में लगा दें और शेष तीनों अंगुलियों को आपस में मिलाकर सामने की ओर फैला दें। हाथों को घुटने पर रखें। हथेलियों नीचे की ओर रखें। ऐसा करने में ज्ञानमुद्रा बनती है। इस मुद्रा के करने से शरीर में गरिमा शक्ति का विकास होता है। साधक को तीनों गुणों (सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण) को वश में करने के लिए इस मुद्रा का उपयोग किया जाता है। सिद्ध योगी इसी मुद्रा में बैठते हैं।

चित्र क्र. 6.1

2. चिन्मुद्रा

विधि– किसी भी आसन में सुख पूर्वक बैठकर अंगूठे से तर्जनी अंगुली को मिलाएँ और सभी अंगुलियों को सीधा रखें हाथ की स्थिति घुटने पर ऊपर की ओर खुला रहे।

चित्र क्र. 6.2

3. ब्रह्माञ्जलि मुद्रा

विधि– किसी भी आसन में बैठकर करें। बाईं हथेली पर दाईं हथेली रखने से अञ्जलि के रूप में ब्रह्माञ्जलि बनती है। इसे नाभि के नीचे आसनबद्ध एड़ियों पर रखा जाता है। इसको करने से अभ्यासी के शरीर के अन्दर हलकापन का विकास होता है। लघिमा शक्ति ब्रह्माञ्जलि मुद्रा को सिद्ध कर लेने से प्राप्त होती है। साधक यदि इस मुद्रा को सिद्ध कर लेते हैं तो उन्हें व्यावहारिक जीवन में भी सफलता प्राप्त होती है।

चित्र क्र. 6.3

6.2 बंध

योग्याभ्यास का यह छोटा परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ग है यह अन्तः शारीरिक प्रक्रिया है। इस अभ्यास के द्वारा व्यक्ति शरीर के विभिन्न अंगो तथा नाड़ियों को नियन्त्रित करने में समर्थ होता है। बन्ध का शाब्दिक अर्थ हैं, बाँधना या कड़ा करना। इस अभ्यास के लिए आवश्यक शारीरिक क्रियाओं का वर्णन ही इस वर्ग के अन्तर्गत किया गया है। शरीर के भिन्न– भिन्न अंगो को धीरे से परन्तु शक्तिपूर्वक संकुचित एवं कड़ा किया जाता है। रक्त का जमाव दूर होता है। यह अंग विशेष रूप से सम्बंधित नाड़ियों के कार्यो को नियमित करता है। परिणामतः शारीरिक कार्य एवं स्वास्थ्य में उन्नति होती है।

बन्ध शारीरिक अभ्यास है, परन्तु अभ्यास के सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त विचारों एवं आत्मिक तरंगों में प्रवेश कर ये चक्रों पर सूक्ष्म प्रभाव डालते हैं। सुषुम्ना नाड़ी में प्राण के स्वतंत्र प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करने वाली ब्रह्मग्रन्थि, विष्णुग्रन्थि तथा रुद्रग्रन्थि इस अभ्यास से खुल जाती है। इस प्रकार आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न होती है। उच्च अभ्यासी सुषुम्ना नाड़ी की जकड़न का अनुभव कर सकते है। यह आध्यात्मिक शक्ति की उच्च अवस्था को प्राप्त व्यक्ति यह ज्ञात करेंगें कि यह अनुभव ठीक वैसा ही जैसा चक्रों के जागरण के समय होता है

जालन्धर बन्ध

स्थिति – पद्मासन, सिद्धासन या वज्रासन में सीधे बैठ जाइए।

विधि–

1. श्वास को अन्दर भर लीजिए। दोनों हाथ घुटनों पर टिके हों अब ठोड़ी को थोड़ा नीचे झुकाते हुए कण्ठकूप में लगाइए।
2. दृष्टि भ्रूमध्य में स्थित कीजिए। छाती आगे की ओर तनी हुई होगी। यह बंध नाड़ी जाल के समूह को बांधे रखता है।

लाभ –

1. कंठ मधुर एवं सुरीली होती है।
2. गले के सभी रोगों में लाभप्रद है।

चित्र क्र. 6.4

उड्डीयान बन्ध

स्थिति – ध्यान के किसी भी आसन पद्मासन या सिद्धासन में बैठिए।

विधि – 1. घुटने भूमि पर सटा कर रखने का प्रयास करें।

2. हथेलियों को घुटनों पर रखें। श्वास बाहर निकालकर पेट को ढ़ीला छोड़िए जालन्धर बन्ध लगाते हुये छाती को थोड़ा ऊपर की ओर उठाइए।

3. उदर की मांसपेशियों को अधिक से अधिक ऊपर तथा भीतर की ओर संकुचित कीजिए अर्थात पेट को कमर से लगा दीजिए। यह पूर्णावस्था है।

चित्र क्र. 6.5

4. यथाशक्ति करने के पश्चात पुनः श्वास लेकर पूर्ववत दुहराइए। प्रारम्भ में तीन बार करना पर्याप्त है।

मूलबन्ध

स्थिति – पद्मासन या सिद्धासन में बैठ जाइए।

विधि–
1. हथेलियों को घुटनों पर रखिए।
2. नेत्र बन्द रखिए।
3. पूरे शरीर को शिथिल कीजिए।
4. लंबी सांस लीजिए (पूरक) और रोक लीजिए (अंतःकुम्भक)
5. मूलाधार प्रदेश के स्नायुओं में आकुंचन क्रिया करते हुए उन्हें ऊपर की ओर खींच कर रखना। यह अंतःकुम्भक की पूर्णावस्था है।

चित्र क्र. 6.6

6. क्षमतानुसार स्थिर रहिए। तत्पश्चात स्नायुओं को ढीला कीजिए।
7. धीरे–धीरे श्वास छोड़िए (रेचक क्रिया)

लाभ –
1. मूलाधार चक्र की जागृति कर कुण्डलिनी जागरण में सहायक है।
2. कोष्ठबद्धता और बवासीर दूर कर जठराग्नि को तेज करता है।
3. वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाता है।

महाबंध –

जब तीनों बन्ध एक साथ लगाया जाता है तब उसे महाबन्ध या त्रिबन्ध कहते हैं।

6.3 दृष्टि

1. **नासाग्रदृष्टि –** इसमें दृष्टि नाक के अग्रभाग पर स्थित की जाती है। इसमें पंच तत्वों का दर्शन होता है। आकाश, वायु, अग्नि, पृथ्वी और जल इनके तात्विक रहस्य इसी दृष्टि से प्राप्त होता है।
2. **मध्यदृष्टि –** इसमें दृष्टि टीका लगाने वाले स्थान पर अर्थात् आज्ञाचक्र पर रखते हैं। इससे प्रकाश या ज्योति का दर्शन होता है।
3. **अर्धउन्मीलितदृष्टि –** इसमें आधी आँखें खुली हुई और आधी बंद होती है। इसके अभ्यास से शाम्भवी और उन्मनी मुद्राओं की सिद्धि होती है।

   (शिव की अधखुली आँखें)
4. **समदृष्टि–** समदृष्टि में निगाह बिलकुल सामने रहती है तथा आँखें खोलकर स्थिर रखते हैं। त्राटक का अभ्यास करने वालों के लिये यह दृष्टि अधिक उपयोगी है।
5. **नेत्र बंद या अन्तःदृष्टि –** आँखें सहजरूप से बन्द रखते हैं। ध्यान के लिये सबसे अच्छी है।

6.4 षटकर्मः–

कुंजल क्रिया

आवश्यक सामग्री– गुनगुना जल, ठंडा जल, नमक, जग, गिलास

विधि– उकड़ू बैठ जाइए। लगभग छः गिलास गुनगुना पानी लीजिए और जितनी जल्दी हो सके, इसे पी लीजिए। खड़े होकर आगे झुकिए। दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा को गले में अधिक से अधिक अन्दर डालिए। नाखून छोटे तथा साफ हों। इसके बाद जिह्वा के पिछले भाग पर मध्यमा से दबाव डालिए। इससे वमन होगा और पेट का सम्पूर्ण जल तेजी से बाहर आ

चित्र क्र. 6.7

जाएगा। जल के पूर्णतः निकलते तक जिह्वा पर दबाव डाले रहिए।

चित्र क्र. 6.8

समय– प्रतिदिन प्रातः काल शौच निवृति के बाद बिलकुल खाली पेट में यह क्रिया करें।

लाभ– कुंजल से अमाशय में स्थित कफ, पित्त, एवं बिना पचा हुआ अन्न आदि बाहर निकल जाता है। कफ रोग, श्वास, दमा अम्लपित्त, में काफी लाभदायक। सिर में चक्कर आने में भी यह क्रिया लाभदायक है। बाद में इसे सप्ताह में एक बार भी किया जा सकता है।

सावधानी– अभ्यास के 20 मिनट बाद तक अन्न ग्रहण न करें।

सीमाएँ– दमा, पेट के नासूर, हृदय विकार व हार्निया में निर्देशक से सलाह लेकर करें।

जलनेति

आवश्यक सामग्री– जलनेति पात्र, गुनगुना जल, नमक

विधि– खड़े होकर या कागासन में बैठकर यह क्रिया किया जा सकता है। जलनेति पात्र में हाथ की ऊपरी त्वचा को सहने लायक गुनगुना जल लें। नमक, अश्रुजल के समान नमकीन हो। नेति पात्र के टोंटी को जो श्वास हमारा चल रहा है उसमें या बाईं नासिका छिद्र में डालें। सिर को थोड़ा तिरछा करें। थोड़ी देर के लिये श्वास रोंके बाद में मुँह खोलकर मुँह से श्वास लें। जल का प्रवाह एक नाक से होकर दूसरे नाक छिद्र से बाहर निकालें। यह क्रिया स्वाभाविक रुप से होगी। इसमें लोटे की स्थिति, सिर का झुकाव सही हो तथा श्वसन क्रिया मुँह से हो। दोनों नासिका छिद्रों से बारी–बारी क्रिया करें। पश्चात् जल पात्र हटा लें। नासिका को बिलकुल शुष्क करें। दोनों पैरों को पास में लाएँ दोनों हाथ पीछे बांध कर रखें। कमर से सामने की ओर झुके। सिर ऊपर उठा रहे। 30 सेकण्ड तक इस स्थिति में रुकें रहे। झुकी स्थिति में ही नासिका से धौंकनी की तरह श्वसन क्रिया करें।

चित्र क्र. 6.9

पुनः सीधे खड़े हो जाएँ। एक नथुना बंद कर खुले नथुने से तीव्र गति से श्वास लें

व छोड़े, इससे नासिका का जल कण बिलकुल निकल जाता है।

लाभ (जलनेति)– यह अभ्यास जुकाम तथा वायु रन्ध्र दोष (sinusitis) के उपचार में मदद करता है। आँख,कान, गले की अनेक बीमारियों जैसे बहरेपन, दृष्टि दोष, गले की कौड़ी का बढ़ना, श्लेष्मा झिल्ली आदि दोषो के निवारण में मदद करता है। मिर्गी या अपस्मार, उन्माद, विक्षेप, अत्यधिक सिरदर्द, अनियंत्रित, क्रोध आदि विकारों पर अच्छा प्रभाव डालता है।

सावधानी– जल का प्रवाह सिर्फ नासिका से हो, गले या मुंह से नहीं। यदि ऐसा है तो सिर की स्थिति हमारी ठीक नहीं हैं।

सीमाएँ– नासिका से रक्तस्राव की दीर्घकालीन बीमारी की अवस्था में योग्य निर्देशक की सलाह पर ही करें।

अध्याय – सात

स्थूल एवं सूक्ष्म व्यायाम

स्थूल व्यायाम की क्रियाएं–

1. हृदय गति अथवा एंजिन दौड़।
2. सर्वांग पुष्टि
3. उर्ध्वगति
4. उत्कूर्दन
5. रेखागति

1. एंजिन दौड़

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा छिपाकर मुठ्ठियाँ बद करें। कोहिनियाँ कमर से सटाएँ। कोहनी से हाथ मोड़कर जमीन से समान्तर सामने की ओर फैलाएँ। करतल भाग एक दूसरे के सामने रखें। श्वास को खींचकर बाएँ पैर को घुटने तक 90^0 के कोण पर उठाएँ। दाहिने हाथ को सामने फैकें। श्वास को छोड़कर दाहिने हाथ और बाएँ पैर पूर्व स्थिति में लाएँ। श्वास को छोडें तुरन्त श्वास खींचकर दाहिना पैर घुटने तक 90^0 के कोण तक उठाएँ बाएँ हाथ को सामने फैकें। श्वास को छोड़कर दाहिना पैर और बायाँ हाथ पूर्व स्थिति में लाएँ। क्रिया को इस प्रकार आठ–दस बार करने के पश्चात् श्वासप्रश्वास के साथ जल्दी–जल्दी अपने स्थान पर दौड़े थकान आने पर क्रिया समाप्त करें।

चित्र क्र. 7.1

लाभ – हाथ व पैरों का दर्द मिटता है। शरीर की स्थूलता कम होती है। सीना जंघाएँ और पिण्डलियाँ पुष्ट बनकर उनका दर्द मिटता है। दौड़ लगाने वाले साधकों के लिए विशेष लाभकारी है। शरीर फुर्तीला और शक्तिशाली बनकर साधक अधिक समय तक काम करने की क्षमता प्राप्त करता है।

2. सर्वांग पुष्टि

स्थिति– दोनों पैरों को फैलाकर खड़े हो।

विधि– दोनों पैरों को फैलाकर सीधे खड़े हो जाएँ। अंगूठा छिपाकर हाथों की मुठ्ठियाँ बन्द करें। दोनों हाथों को नीचे झुकाकर बाएँ टखने के पास बायाँ हाथ नीचे और दाहिना हाथ कलाई के ऊपर स्थापित करें। श्वास को खींचकर धीरे–धीरे दोनों हाथों को नीचे से ऊपर की ओर बाएँ कन्धे के बाजू से सिर तक ले जाएँ और दाहिने टखने की ओर श्वास को छोड़ें। दाहिना हाथ नीचे ओर बायाँ ऊपर रखें। पुनः श्वास खींचकर दोनों हाथों को नीचे से ऊपर दाहिने कन्धे तक लाते हुए सिर के ऊपर तक ले जाएँ। बाईं ओर मुड़ते हुए दोनों हाथों को बाएँ कन्धे से नीचे की ओर बायें टखने तक लाएँ। श्वास को छोड़ें हाथ को बदल बदलकर बायाँ हाथ नीचे और दाहिना हाथ ऊपर रखें। इस प्रकार क्रिया को तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.2

लाभ–

1. इस क्रिया के माध्यम से समस्त अंग पुष्ट बनते हैं।
2. शरीर लचीला बनकर साधक का ठिगनापन दूर होता है।
3. क्षय–रोगियों के लिए विशेष लाभकारी है।
4. फेफड़ों के रोग दूर होते हैं।
5. कमर व पीठ का दर्द मिटता है।
6. पाचन क्रिया तीव्र बनती है।
7. शरीर सुन्दर व कांतिवान बनता है।
8. उम्र में प्रथम 20 वर्ष तक साधक की लम्बाई बढ़ती हैं।

3. उर्ध्वगति

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– श्वास को खीचतें हुए बाएँ पैर को 90^0 कोण पर ऊपर उठाएँ। बाएँ हाथ को कन्धे के बाजू में फैलाकर कोहिनी से मोड़ते हुए सिर की ओर ऊपर उठाएँ हाथ को सिर के ऊपर ताने हथेलियाँ सामने रखें। श्वास छोड़कर बाएँ पैर को जमीन पर

टिकाएँ। बाएँ हाथ को सिर के ऊपर फैलाएँ श्वास को खींचकर दाहिने पैर की जमीन से 90° अंश कोण पर ऊपर उठाएँ दाहिने हाथ को कन्धे के बाजू में फैलाकर कोहनी से मोड़ते हुए सिर की ओर ले जाएँ। श्वास को छोड़कर दाहिने पैर को जमीन पर टिकाते हुए दाहिने हाथ को सिर के ऊपर फैलाएँ। बाएँ हाथ को बाएँ कन्धे के बाजू में फैलाकर कोहिनी से मोड़ते हुए सिर की ओर ले जाएँ। इस प्रकार क्रिया को धीरे–धीरे 8 से 10 बार करने पश्चात् अपने स्थान पर दौड़ते हुए यथाशक्ति करें। थकान आने पर क्रिया को समाप्त करें।

चित्र क्र. 7.3

लाभ–
1. हाथ और पैर पुष्ट बनते है।
2. फेफड़े के रोग नष्ट होते हैं।
3. शरीर स्थूलता दूर होती है।
4. हाथ और पैर ठन्डे होने की शिकायत दूर होती है।
5. जंघाओं का मोटापा दूर होता है।
6. खिलाड़ी साधकों के लिए विशेष लाभकारी है।

उत्कूर्दन

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा छिपाकर दोनों हाथों की मुठ्ठियाँ बन्द करें। दोनों हाथों को कन्धों के सामने जमीन से समानान्तर फैलाएँ। हथेली एक दूसरे के सामने रखें। श्वास को खींचकर दोनों हाथों को सामने से चक्राकार में घुमाते हुए कुहनी से मोड़कर कमर से सटायें। हाथों को जमीन से समानान्तर रखें। श्वास को छोड़ें श्वास को अन्दर खींचते हुए उछलकर दोनों एड़ियों से नितम्ब को ठोकें। श्वास छोड़ते हुए हाथों को कन्धों के सामने फैलाएँ और पैरों को जमीन से टिकाएँ। इस प्रकार क्रिया को पाँच बार करें।

लाभ–
1. उम्र के प्रथम 20 वर्ष तक साधक की लम्बाई बढ़ती है।

चित्र क्र. 7.4

2. कुण्डली जागरण में सहायक है।

3. हाथ और पैर पुष्ट बनते हैं। तथा उनका दर्द मिटता है।

4. नितम्ब व जंघाएँ पतली बनती है।

5. सीना चौड़ा, और पुष्ट बनता है।

6. फेफड़ों के रोग नष्ट होते हैं।

5.रेखागति

स्थिति– 1. समावस्था में खड़े रहे।

विधि– श्वास को खींचकर बाएँ पैर की एड़ी को ऊपर उठाकर बाजू से अर्द्धचक्राकार ले जाते हुए दाहिने पैरे के अंगूठे के आगे रखें। श्वास को खींचकर दाहिने पैर की एड़ी को ऊपर उठाकर बाजू से अर्द्ध चक्राकार घुमाते हुए बाएँ पैर से अंगूठे के आगे रखें श्वास छोड़ें। सामने देखते हुए 10 कदम आगे चलें।

चित्र क्र. 7.5

2. श्वास को खींचकर दाहिने पैर की एड़ी को ऊपर उठाकर दाहिनी ओर अर्द्धचक्राकार में पीछे की ओर से दाहिने अंगूठे को बाईं एड़ी के पीछे खड़ा करें। श्वास छोड़ें एवं पुनः श्वास खींचकर बाएँ पैर की एड़ी को ऊपर उठाकर बाईं ओर अर्द्ध चक्राकार घुमाते हुए बाएँ अंगूठे को दाहिनी एड़ी के पीछे रखें। इस प्रकार 10 कदम पीछे चलें। चलते समय सामने देखें।

लाभ– मन एकाग्र होता है। इसके निरन्तर अभ्यास से पतली रस्सी या तार पर चलने की क्षमता साधक को प्राप्ति होती है। आरक्षक सैनिक और सर्कस में काम करने वाले व्यक्तियों के लिए विशेष लाभकारी है। शरीर सन्तुलित बनकर पुष्ट बनता है।

7.2 यौगिक सूक्ष्म व्यायाम

मानव शरीर की रचना बड़ी विचित्र है। इसक निर्माण में किसी प्रकार की कोई कमी

नहीं है। इसकी रचना सर्व प्रकार से पूर्ण है। कई अंगों से मिलकर एक दिमाग बनता है जिसे संस्थान कहा गया है। अतः भाग सक्रिय रहे इसके लिए यौगिक सूक्ष्म व्यायाम बहुत उपयोगी है। सूक्ष्म व्यायाम 17 तत्वों को प्रभावित करता है। पाँच प्राण–प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान पाँच कर्मेन्द्रियाँ–हस्त, पाद,वाक्, गुदा, मूत्रेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ चक्षु, नासिका, कान, त्वचा, जिह्वा मन और बुद्धि, इस तरह 17 तत्व प्रभावित होते हैं।

सूक्ष्म व्यायाम के आविष्कारक स्वामी कार्तिकेय एवं लिपिबद्धकर्ता स्वामी धीरेन्द्र ब्रह्मचारी हैं। इसमें 48 क्रियाएँ हैं जिससे समुचित शरीर का व्यायाम हो जाता है।

चित्र क्र. 7.6

1. यौगिक सूक्ष्म क्रियाएँ

क्रिया नं. 1 यौगिक प्रार्थना

समावस्था–एड़ी, पंजा अंगूठा मिलाकर सीधे खड़े होकर सामने की ओर देखें हाथों को जंघा से सटाएँ करतल भाग अन्दर की ओर रखें, इसे समावस्था कहते हैं।

विधि– हाथ जोड़कर अंगूठे को गले पर स्थापित करें। भुज बल्लियों से वक्षस्थल को दबाएँ। श्वास को सामान्य रखें मन एकाग्र होने पर हाथों को ढीला छोड़ें, कम से कम आधा मिनिट भगवान् का ध्यान करें।

लाभ–
1. मन की एकाग्रता बढ़ती है।
2. मानसिक शान्ति ओर आत्म साक्षात्कार के लिए लाभकारी है।
3. मनोवहा नाड़ियों पर दबाव होने के कारण मन को संयम में लाया जाता है।
4. मानसिक रोग ठीक होते हैं।

2. उच्चारण स्थल व विशुद्ध चक्र शुद्धि

स्थिति– समावस्था में खड़े होंगे।

विधि– बाएँ हाथ की कनिष्ठिका अनामिका मध्यमा और तर्जनी चारों को गले पर स्थापित करें, करतल भाग अन्दर की ओर रखें, दाहिने हाथ की तर्जनी को बाएँ पर उल्टा स्थापित करें, दोनों हाथों को कन्धों के सीध में रखें, गर्दन को इसी अवस्था में रखते हुए हाथों को बाजू से पूर्व अवस्था में लाएँ। 25 बार सीने के बल श्वासप्रश्वास करें, क्रिया को समाप्त करें ध्यान को विशुद्ध चक्र या कण्ठ पर केन्द्रित करें।

लाभ–
1. कण्ठ की समस्त नाड़ियाँ जहाँ वात पित्त, कफ की मात्राएँ एकत्र हो जाती हैं

इस क्रिया को करने से वे पेट में चली जाती हैं और शब्दों का उच्चारण स्पष्ट होने लगता है।

2. हकलाना और तुतलाना जैसे विकार ठीक होते हैं। कटु स्वर मधुर बनता है।
3. संगीतज्ञों के लिए विशेष लाभकारी है।
4. मस्तिष्क के विचार ठीक होते हैं।
5. विचार शक्ति की वृद्धि होती है।

चित्र क्र. 7.7

3. बुद्धि तथा धृति शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े हों।

विधि– गर्दन को धीरे–धीरे ऊपर ले जाएँ। भूमध्य (दोनों भौंए के बीच) में देखें, क्रिया को इस कल्पना के साथ करिए जिसमें दुर्बद्धि हटकर उनका विकास हो, वह तीव्र प्रखर हो, 25 बार श्वास–प्रश्वास सीने के बल करें। ध्यान को शिखा मण्डल या चोटी पर केन्द्रित करें।

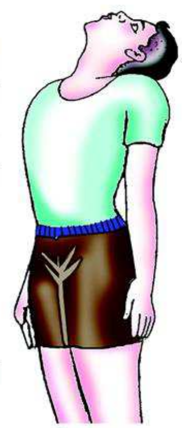
चित्र क्र. 7.8

लाभ–
1. शिखा मंडल के रोग दूर करने में सहायक हैं।
2. वृद्धि विकसित होती है।
3. शरीर के इन्द्रियों में शारीरिक व मानसिक क्षमता बढ़ती है।
4. इच्छा शक्ति अथवा संकल्प शक्ति का प्रादुर्भाव होता है।
5. मन्द बुद्धि तीव्र होती है।

4. स्मरण शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– पैर के अंगूठे के अन्दाजन 4½ फिट दूरी पर देखें। क्रिया को इस कल्पना के साथ

करें कि हम विस्मरण को दूर कर स्मरण शक्ति तीव्र ओर प्रखर कर रहे हैं तथा उसका विकास कर रहे हैं। 25 बार सीने के बल श्वासप्रश्वास करें।

ध्यान को तालु स्थान पर रखें।

लाभ–

1. तालु स्थान से शिखा मंडल तक के अंगों का हिस्सा कफ विकार से मुक्त होता है।
2. मस्तिष्क की थकान दूर होती है। विस्मृति दूर होती है।
3. विक्षिप्त अवस्था पागलपन ठीक करने में सहायक है।
4. मानसिक शक्ति तीव्र बनती है।

चित्र क्र. 7.9

5. मेधा शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– ठुड्डी कण्ठ में लगाएँ, नेत्र बन्द रखें। 25 बार श्वासप्रश्वास सीने के बल करें ध्यान को गर्दन के पीछे गठीले स्थान पर (वीरेवाहा नाड़ी का स्थान है) केन्द्रित करें। क्रिया को समाप्त कर पूर्व स्थिति में आएँ।

लाभ–

1. कण्ठ की ग्रन्थियों की शुद्धि होती है।
2. सहस्त्रार चक्र से निकलने वाला अमृत शरीर को तथा मनको विकसित करने में सहायक है।
3. शरीर से आलस्य, निद्रा जैसे दोष ठीक होते हैं ओर ऊर्जा शक्ति तीव्र बनती है।
4. शरीर के कफ विकार ठीक होते हैं। विस्मरण व बुद्धि मन्दता भी ठीक हो जाते हैं।
5. साधक का शरीर फुर्तीला और आकर्षक बनता है।

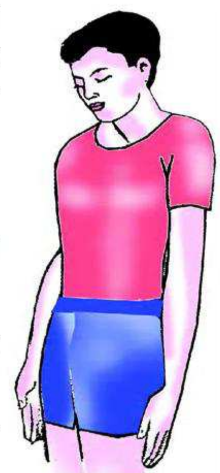

चित्र क्र. 7.10

6. नेत्र शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– नाक के अग्र भाग को देखते हुए गर्दन को धीरे–धीरे ऊपर की ओर ले जाएँ। टीका, बिन्दी, तिलक लगाने वाले स्थान को लगातार अपलक देखना है, आरम्भ में आधा मिनट देखें, नेत्रों में आँसू आने पर वैसे ही सूखने दें, श्वास को सामान्य रखें धीरे–धीरे सामान्य स्थिति में वापस आएँ। ध्यान नेत्रों पर रखें।

चित्र क्र. 7.11

लाभ–

1. नेत्रों की ज्योति बढ़ती है, आँखों से आँसू आना, कम दिखाई देना आदि विकार नष्ट होते हैं।
2. आकर्षण शक्ति का प्रादुर्भाव होता है, साधक दूसरे व्यक्ति जो प्रभावित करने की क्षमता प्राप्त करता है।
3. त्राटक क्रिया के लिए सहायक है। मन एकाग्र बनाकर चित्त शुद्धि होती है।
4. इसके निरन्तर अभ्यास से और अधिक समय बढ़ाने से चश्मा छूट सकता है।

7. कपोल शक्ति विकासक

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि – हाथों की अंगुलियों को परस्पर मिलाए अंगूठे से नाक बन्द करें, गर्दन को ऊपर ले जाएँ। मुँह को काक चोंच की तरह बनाएँ जिस तरह सीटी बजाते हैं। इस प्रकार आठ अंक मन में गिनते हुए मुँह से श्वास को अन्दर खींचे तुरन्त मुख को बन्द करें। गालों को फुलाएँ नेत्र बन्द रखें ठुड्डी को कण्ठ में स्थापित करें। 32 अंक तक मन में गिनते हुए श्वास को रोकें–तत्पश्चात् गर्दन सीधी कर अंगूठा हटाकर सोलह अंक तक मन में गिनते हुए नाक से श्वास को बाहर छोडें। श्वास को रोकते समय कनिष्ठका सीने पर रखें। दोनों हाथों को कन्धों के सीध में रखें क्रिया को तीन बार दुहराइए।

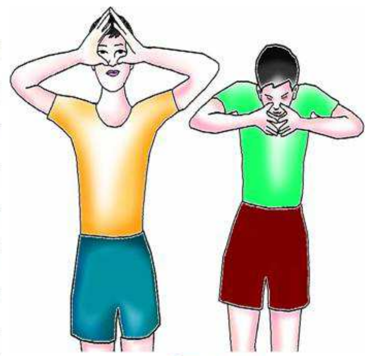

चित्र क्र. 7.12

लाभ–
1. साधक दीर्घायु बनता है।
2. प्यास कम होती है।
3. मुख के रोग दूर होते हैं।
4. दाँत मज़बूत और मुँह की दुर्गन्ध दूर होती है।
5. मुख प्रफुल्लित होकर गालों की झुर्रियों, चेहरों के फोड़े, फुन्सियाँ ठीक होते हैं। सौंदर्य प्रसाधनों की आवश्यकता नहीं होती है।
6. सिर दर्द, नेत्र दोष, पेट की गर्मी, बालों का पकना, झड़ना आदि विकार ठीक होते हैं। चेहरे की नस नाड़ियाँ फुर्तीली बनती है।

8. कर्ण शक्ति विकासक

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि– हाथ के अंगूठे से कान बन्द करें तर्जनी से नेत्र और मध्यमा से नाक को बन्द करें। क्रिया नम्बर सात के समान गर्दन को ऊपर ले जाएँ। आठ अंक तक मुँह से श्वास भरे गालों को फुलाएँ ठुड्डी कण्ठ में लगाएँ। 32 अंक तक मन में गिनते हुए श्वास को रोकें। दोनों हाथों को कन्धों के सीध में रखें। तथा जमीन के समानान्तर रखें। गर्दन को सीधा कर मध्यमा हटाते हुए नाक से 16 अंक में श्वास को बाहर छोड़ें। क्रिया तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.12

लाभ–
1. कान से आने वाला मैल,कान का बहना, कम सुनाई देना आदि विकार नष्ट होते हैं।
2. कर्ण रन्ध्र की शक्ति जागृत होती है और वे पुष्ट बनते हैं।
3. कान, नाक आँख और मुँह बन्द करने से सुषुम्ना नाड़ी का मार्ग शुद्ध होता है जिनके कारण विविध प्रकार के नाद सुनाई देते हैं।
4. प्राणायाम के लिए विशेष लाभकारी क्रिया है।

9. ग्रीवा शक्ति विकासक नं. 1 भाग क.

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) श्वास खींचते हुए गर्दन को बाएँ कंधे के सीध में ले जाएँ बिना रुके गर्दन को दाहिने ओर लाएँ, श्वास छोड़े दाहिने कंधे से सीध में देखें। क्रिया को इसी तरह 10 बार दोहराएँ।

(ख) श्वास खींचकर गर्दन को नीचे से ऊपर की ओर ले जाएँ। ऊपर देखें, श्वास छोड़कर गर्दन को नीचे, की ओर वापस लाएँ। क्रिया को 10 बार करें।

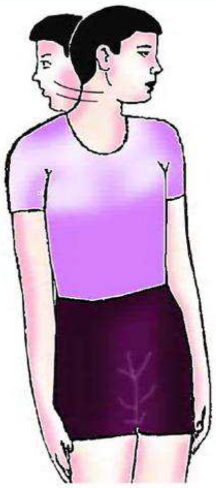

चित्र क्र. 7.13

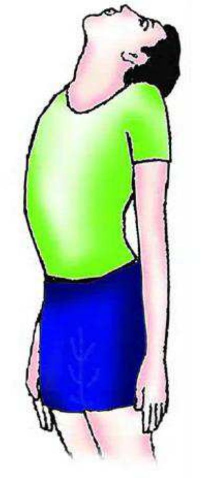

चित्र क्र. 7.13.ब

10. ग्रीवा शक्ति विकासक नं. 2

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– ठुड्डी कण्ठ में लगाएँ। नेत्र बन्द न करें। श्वास खींचकर रोकें, सिर को बाएँ कंधे की ओर से चक्राकार में घुमाते हुए सामने लाएँ श्वास छोड़ें, पुनः श्वास भरें। चक्राकार में दाहिनी ओर से बाईं ओर सिर को वापस लाएँ। पूर्ण चक्र होने पर श्वास छोड़ें। प्रयास करें कि दोनों समय गर्दन को इतना झुकाएँ कि कान कंधे से स्पर्श करने का प्रयास करें। कंधों को न उठाएँ। क्रिया को तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.14

11. ग्रीवा शक्ति विकासक नं. 3

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– श्वास छोड़कर पेट पिचकाएँ, श्वास खींचकर पेट फुलाते हुए गले की नसें तानें। क्रिया को 10 बार करें।

क्रिया नं. 9, 10, 11 के लाभ

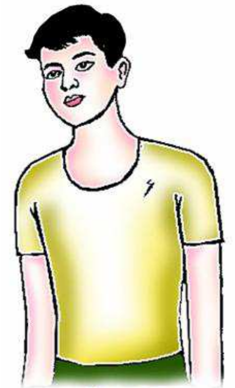

चित्र क्र. 7.15

1. ग्रीवा के समस्त दोष दूर होते हैं। गर्दन का मोटापा कम होता है।
2. टॉन्सिल, कण्ठमाला आदि रोग ठीक होते हैं।
3. स्वर मधुर व सुरीला बनता है। हकलाहट और तुतलापन जैसे विकार ठीक होते हैं। गर्दन पुष्ट और मजबूत बनती है।

12. स्कन्ध तथा बाहुमूल शक्ति विकासक

चित्र क्र. 7.16

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा छिपाकर मुठ्ठी बन्द करें क्रिया नं. सात और आठ की तरह गर्दन को ऊपर ले जाएँ काकचोंच बनाएँ आठ अंक मन में गिनने तक मुँह से श्वास को अन्दर खींचे। मुँह को बन्द करके गालों को फुलाएँ ठुड्डी कण्ठ में लगाएँ नेत्रों को बन्द रखें। 32 अंक मन में गिनते हुए कन्धों को ताकत के साथ नीचे ऊपर घुमाए हाथों को कड़ा रखें। कोहनी से हाथ को न मोड़े गर्दन को सीधा कर 16 अंक में नाक से श्वास को बाहर छोड़ें। कन्धों का हिलाना बन्द करें। क्रिया तीन बार दुहराएँ।

लाभ–

1. कन्धों की हड्डियाँ ओर मांस पेशियाँ शुद्ध बनाकर शक्तिशाली बनती है।
2. कन्धें सुडौल व सुन्दर बनते है। कन्धों का दर्द मिटता है। गर्दन के विकार ठीक होते है।

13. भुजबंध शक्ति विकासक

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि – अंगूठा छिपाकर मुठ्ठी बन्द करें कोहनी से हाथ को मोड़कर कोहनी से अंगुली तक

का हिस्सा जमीन से समानान्तर रखें। श्वास खींचकर हाथ को कन्धों के सामने फेकें। श्वास छोड़कर हाथों को पूर्व स्थिति में लाएँ। क्रिया को 5 से 10 बार दुहराएँ। हाथों को पूर्व स्थिति में लाएँ।

लाभ–

1. भुजाओं व कन्धों का दर्द मिटता है।
2. भुजबन्ध पुष्ट बनते हैं।
3. स्थूल भुजाएँ सन्तुलित बनती हैं।
4. आरक्षक व सैनिक के लिए लाभकारी है।

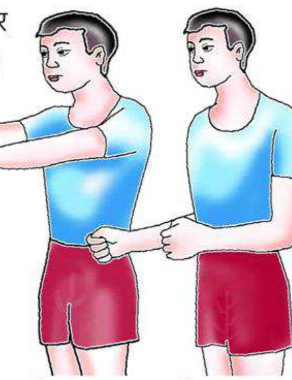

चित्र क्र. 7.17 चित्र क्र. 7.17.ब

14. कोहनी शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) अंगूठा छिपाकर मुठ्ठी बन्द करें। कोहनियाँ कमर से सटाएँ। करतल भाग आगे व कर पृष्ठ पीछे रखें। श्वास को लेते हुए कोहनी से हाथ को मोड़कर कन्धे तक लाएँ श्वास छोड़कर हाथ को पूर्व स्थिति में ले जाएँ। इस तरह दस बार करें।

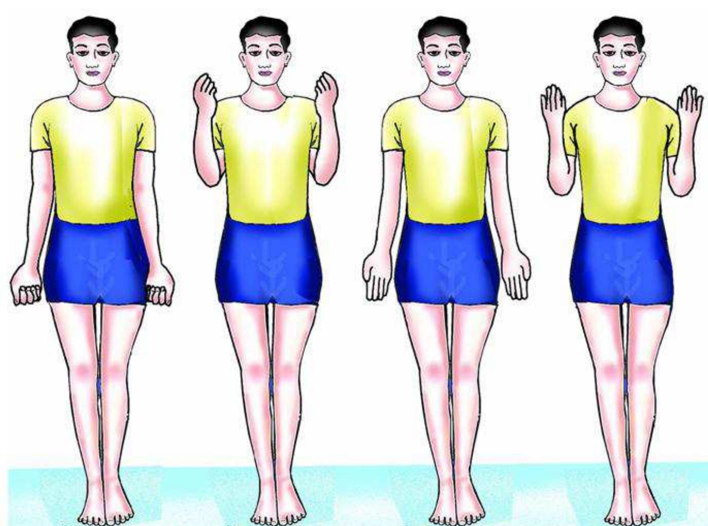

चित्र क्र. 7.18 अ चित्र क्र. 7.18 ब चित्र क्र. 7.18 स चित्र क्र. 7.18 द

(ख) हाथ की मुठ्ठियाँ खोलें। अंगुलियाँ सटाएँ। करतल आगे करपृष्ठ पीछे रखें। कोहनियाँ कमर से सटाएँ भाग क के समान विधि को दस बार करें।

लाभ–
1. कोहनी का दर्द मिटता है।
2. हड्डियों के जोड़ पुष्ट बनते हैं।
3. कोहनियाँ सुन्दर व आकर्षक बनती हैं।

15. भुजबल्ली शक्ति विकासक

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) श्वास खींचकर बाएँ हाथ को बांजू से कन्धें के ऊपर ले जाएँ। भुजबन्ध को कान से स्पर्श कराएँ हथेली बाहर की ओर रखें, श्वास छोड़कर स्थिति में लाएँ, क्रिया 10 बार करें।

(ख) श्वास खींचकर दाहिने हाथ को बाजू से कन्धें के ऊपर ले जाएँ, भुजबन्ध कान से स्पर्श करें हथेली का तल भाग बाहर की ओर रखें। श्वास छोड़ते हुए हाथ को नीचे लाएँ। क्रिया दस बारे करें।

(ग) श्वास खींचकर दोनों हाथों को बाजू से कन्धों के ऊपर ले जाएँ, हथेली का तल भाग बाहर की ओर रहे भुजबन्ध कान से स्पर्श करें, श्वास छोड़कर हाथों को पूर्व स्थिति में लाएँ क्रिया को दस बार करें।

चित्र क्र. 7.19

लाभ–
1. भुजाएँ पुष्ट व बलशाली बनती है।
2. कोहनी से कलाई का हिस्सा सन्तुलित बनकर उसके दर्द मिटते हैं, भुजबल्लियाँ शक्तिशाली बनकर हाथों से कार्य करने की क्षमता बढ़ती है।

16. पूर्ण भुजा शक्ति विकासक भाग क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) अंगूठा छिपाकर बाएँ हाथ की मुठ्ठी बन्द करें, मुठ्ठी खड़ी रखें, हाथ को कन्धे के सामने जमीन के समानान्तर फैलाएँ, हाथ को कड़ा करें, श्वास को कड़ा करें श्वास खींचकर रोके, हाथ को चक्राकार में दस बार ऊपर से नीचे

घुमाएँ, कोहनी से हाथ को मोड़कर श्वास छोड़ते हुए हाथ को समाने फेंके।

भाग (ख) भाग 'क' के समान बाएँ हाथ को नीचे से ऊपर दस बार घुमाएँ, कोहनी से हाथ को मोड़कर श्वास छोड़ते हुए हाथ को सामने फेकें।

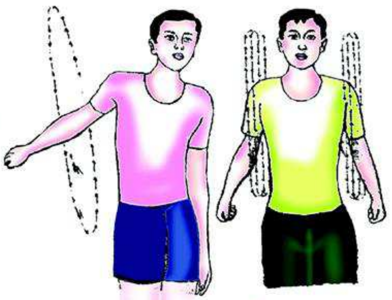

चित्र क्र. 7.20 अ चित्र क्र. 7.20 ब

भाग (ग) अंगूठा छिपाकर दाहिने हाथ की मुठ्ठी बन्द करें, कन्धें के सामने हाथ को जमीन से समानान्तर फैलाएँ, श्वास खींचकर रोकें, दाहिने हाथ को चक्राकार में दस बार ऊपर से नीचे घुमाएँ, कोहनी से हाथ मोड़कर श्वास छोड़ते हुए हाथ सामने फेकें क्रिया समाप्त करें।

भाग (घ) भाग ग के समान विधि को नीचेसे ऊपर घुमाते हुए दस बार करें।

(च) अंगूठा छिपाकर मुठ्ठी बन्द करें, दोनों हाथ की कन्धें के सामने जमीन से समानान्तर फैलाएँ, विधि को दस बार भाग क, ख, ग के समान ऊपर से नीचे घुमाकर पूरा करें।

लाभ–
1. शरीर के वायु विकार ठीक होते हैं।
2. हाथों की नस नाड़ियाँ व जोड़ों का दर्द मिटता है।
3. हाथों की सौंदर्य वृद्धि होती है। भुजाएँ शक्तिशाली व पुष्ट बनती है।

17. मणिबन्ध शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि– (क) अंगूठा छिपाकर मुठ्ठियाँ बन्द करें दोनों हाथों को कन्धों के सामने जमीन से समानान्तर फैलाएँ दोनों हाथों में कन्धों के बराबर अन्तर रखें, करतल भाग नीचे की ओर रखें, श्वास को खींचते हुए कलाई को ताकत के साथ धीरे–धीरे नीचे से ऊपर ले

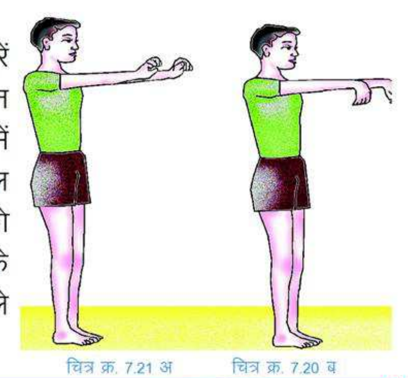

चित्र क्र. 7.21 अ चित्र क्र. 7.20 ब

जाएँ, श्वास छोड़कर कलाई को ऊपर से नीचे की ओर लाएँ, क्रिया को पाँच बार करें।

(ख) अंगूठा छिपाकर मुट्ठियां बन्द करें, हाथों को कोहनी से मोड़कर सीने से सामने जमीन से समानान्तर रखें, श्वास खींचते हुए कलाई को ताकत के साथ धीरे–धीरे नीचे से ऊपर ले जाएँ, श्वास छोड़कर कलाई की ताकत के साथ ऊपर से नीचे लाएँ, विधि को पाँच बार करें।

18. कर पृष्ठ शक्ति विकासक – क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि–(क) हाथ की मुट्ठियाँ खोलकर अंगुलियाँ सटाएँ हुए दोनों हाथों को कन्धे के सामने जमीन से समानान्तर फैलाएँ श्वास को खींचकर हथेली को ताकत के साथ धीरे–धीरे नीचे से ऊपर ले जाएँ। श्वास को छोड़कर हथेली को धीरे–धीरे ऊपर से नीचे लाएँ, क्रिया को पाँच बार करें।

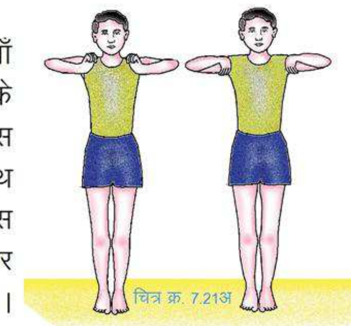

चित्र क्र. 7.21अ

(ख) कोहनी से हाथ को मोड़कर सीने के सामने जमीन के समानान्तर फैलाएँ, करतल भाग नीचे रखें शेष विधि को भाग क के समान पाँच बार करें।

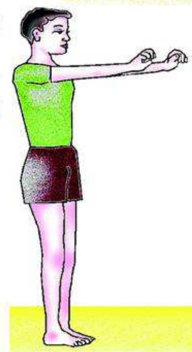

चित्र क्र. 7.21अ

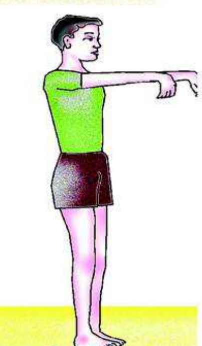

चित्र क्र. 7.21ब

19. कर तल शक्ति विकासक – क

स्थिति– (क) दोनों हाथों की अंगुलियाँ फैलाकर कन्धों के सामने हाथों को जमीन से समानान्तर रखें करतल भाग नीचे की ओर हो श्वास को खींचते हुए हथेली को ताकत के साथ धीरे–धीरे नीचे से ऊपर तानें श्वास को छोड़कर हथेली को ताकत के साथ ऊपर से नीचे लाएँ, क्रिया को पाँच बार करें।

(ख) दोनों हाथों को कोहनी से मोड़कर अंगुलियों फैलाते हुए सीने के सामने जमीन से समानान्तर रखें करतल भाग जमीन की ओर रखें शेष विधि भाग–क के समान पाँच बार दुहराएँ।

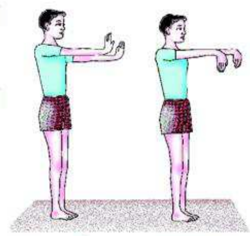
चित्र क्र. 7.22 अ

चित्र क्र. 7.22 ब

20. अंगुली मूल शक्ति विकासक – क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि– दोनों हाथों की कलाई तक, के हिस्से को कड़ा रखते हुए कन्धों के सामने जमीन से समानान्तर फैलाये हथेली को ढीला छोड़े, करतल भाग जमीन की ओर रखें श्वास सामान्य रखते हुए अंगुलियों को ताकत के साथ 10–15 बार आगे पीछे हिलाएँ।

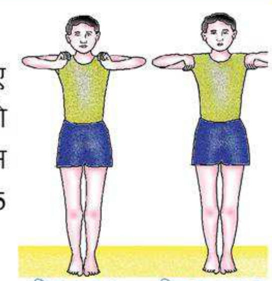
चित्र क्र. 7.23 चित्र क्र. 7.23 ब

21. अंगुली शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि–(क) दोनों हाथों का पंजा फैलाते हुए कन्धों के सामने जमीन के समानान्तर तानें, श्वास को सामान्य रखकर दस–पंद्रह बार अंगुलियों के अग्र भाग को ताकत के साथ ऊपर से नीचें मोड़ें।

(ख) कोहनी से हाथ को मोड़ कर सीने के सामने जमीन से समानान्तर तानें भाग–क के समान पंजों को फैलाएँ 10–15 बार विधि को पूरा करें।

17 से 21 तक क्रिया के लाभ

इन समस्त क्रियाओं के करने से कलाई, करपृष्ठ करतल एवं अंगुलियाँ पुष्ट बनती हैं और उनके विकार ठीक होते हैं। हथेलियाँ शक्तिशाली बनती है इन क्रियाओं के करने से मनोवहा नाड़ियाँ प्रभावित होती है जिनसे शरीर और मन एकाग्र होकर अध्यात्मिक उन्नति होती है हाथों का कंपन ठीक होता है। जोड़ों का दर्द मिटता है। टंकण यन्त्र परकार्य करने वाले साधक लाभान्वित होते हैं।

चित्र क्र. 7.23

चित्र क्र. 7.23

22. वक्ष स्थल शक्ति विकासक नं. – 1

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि– करतल भाग अन्दर की ओर रखते हुए हाथों को जंघा पर स्थापित करें श्वास भरकर दोनों हाथों को ऊपर ले जाएँ हाथों के मध्य सिर को रखें ऊपर देखें, श्वास छोड़ते हुए हाथों को धीरे–धीरे पहली अवस्था में लाएँ क्रिया तीन बार करें।

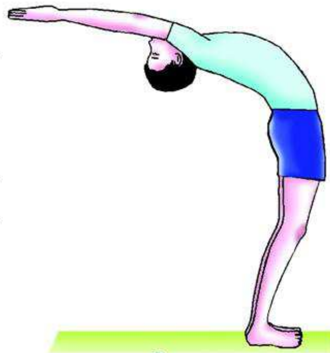

चित्र क्र. 7.24

23. वक्ष स्थल शक्ति विकासक नं. 2

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि– दोनों हाथों को जंघा के बाजू में रखें। श्वास को अन्दर लेते हुए दोनों हाथों को बाजू से पीछे की ओर पीठ की तरफ तानें, ऊपर देखें सीना फुलाएँ। श्वास छोड़कर दोनों हाथों को पूर्व अवस्था में लाएँ क्रिया को तीन बार करें।

दोनों के लाभ–1. फैफड़े पुष्ट बनकर उनके रोग नष्ट होते हैं।

2. हृदय रोग दूर होता है। टी.बी., दमा, कफ, खांसी आदि

चित्र क्र. 7.25

रोग नष्ट होते हैं।

3. रीढ़ की हड्डी का टेड़ापन दूर होता है। सीना चौड़ा व पुष्ट बनता है।

24. उदर शक्ति विकासक (अजगरी) नं.–1

चित्र क्र. 7.26

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि– श्वास को बाहर निकालकर पेट पिचकाते हुए पीठ की ओर ले जाएँ श्वास को यथा शक्ति रोकें, श्वास को अन्दर खींचते हुए पेट फुलाएँ, श्वास को यथा शक्ति रोकें। क्रिया तीन बार करें।

25. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. – 2

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि क्रिया नम्बर दो के समान बाईं हथेली को अंगूठा छोड़कर शेष अंगुलियों को गले पर स्थापित करें, दाएँ हाथ की तर्जनी बाएँ हाथ पर उल्टी टिकाएँ, गर्दन को इसी अवस्था में रखते हुए दोनों हाथों को बाजू से नीचे लाएँ, श्वास बाहर निकालकर पेट पिचकाएँ, श्वास को अन्दर लेकर पेट को फुलाएँ, ध्यान को पेट पर केन्द्रित करें, बिना रुके हुए जल्दी–जल्दी क्रिया को पच्चीस बार करें।

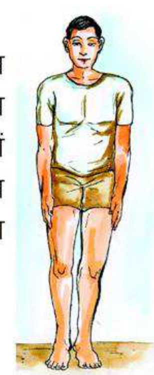

चित्र क्र. 7.26 ब

26. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. – 3

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि– क्रिया नम्बर तीन के समान गर्दन को धीरे–धीरे ऊपर ले जाएँ। भ्रूमध्य में देखें। श्वास छोड़कर पेट पिचकाएँ। श्वास अन्दर लेकर पेट फुलाएँ। बिना रोके हुए क्रिया पच्चीस बार करें।

चित्र क्र. 7.27

27. उदर शक्ति विकासक नं. – 4

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– क्रिया नं. 4 के के समान पैर के अंगूठे से अंदाजन 4½ फीट दूरी से देखें। श्वास छोड़कर पेट पिचकाएँ। श्वास खींचकर पेट को फुलाएँ। बिना रुके हुए क्रिया को पच्चीस बार करें।

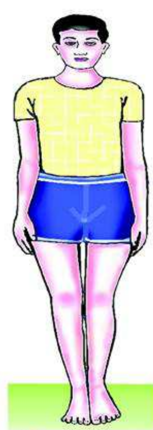

चित्र क्र. 7.28

28. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. – 5 'कुम्भक'

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– क्रिया नं. 7, 8, 12 के समान गर्दन को धीरे–धीरे ऊपर ले जाएँ। काकचोंच बनाते हुए आठ अंक मन में गिनें। मुँह से श्वास अन्दर लें। मुँह को बन्दकर तुरन्त गालों को फुलाएँ, ठुड्डी कण्ठ कूप से लगाएँ। नेत्रों को बन्द करें। साधक चक्कर आने की स्थिति में नेत्र खोल दें। यथाशक्ति पेट फुलाएँ। 32 अंक तक श्वास को अन्दर रोकें। गर्दन सीधी करते हुए 16 अंक में नाक से श्वास बाहर निकाले क्रिया एक बार करें।

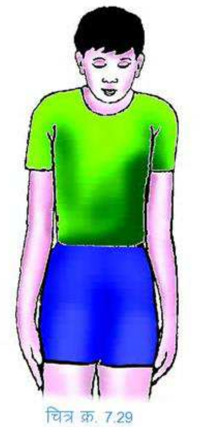

चित्र क्र. 7.29

29. उदर शक्ति विकासक नं. – 6

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा पेट की ओर रखते हुए दोनों हाथों को कमर पर स्थापित करें 60 अंश कोण पर आगे झुके। सामने देखें, श्वास को छोड़कर पेट पिचकाएँ। श्वास खींचकर पेंट फुलाएँ, 25 बार करें।

चित्र क्र. 7.30

30. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. – 7

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– क्रिया विधि अंगूठा पेट की ओर रखकर दोनों हाथों को कमर पर स्थापित करें। 90 अंश कोण पर आगे झुकें। सामने देखें। श्वास छोड़कर पेट को पिचकाएँ। श्वास को खींचकर पेट को फुलाएँ। क्रिया 25 बार करें।

चित्र क्र. 7.31

31. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. – 8

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा पेट की ओर रखते हुए दोनों हाथों को कमर पर स्थापितकरें 60 अंश के कोण पर आगे झुके सामने देखें, श्वास छोड़कर आंतरिक शक्ति से पेट को जल्दी–जल्दी हिलाएँ। क्रिया को यथाशक्ति करें।

चित्र क्र. 7.31 ब

32. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. – 9

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा पेट की ओर रखकर दोनो हाथों को कमर पर स्थापित करें 90 अंश कोण पर आगे झुके सामने देखें पेट से श्वास को बाहर निकाले। खाली पेट को आंतरिक शक्ति से आगे पीछे हिलाएँ। इस क्रिया को एक बार यथाशक्ति करें।

चित्र क्र. 7.32

33. उदर शक्ति विकासक क्रिया नं. 10 (नौलि)

स्थिति– दोनों पैरों में एक हाथ का अन्तर रखकर खड़े हों, दोनों हाथों को नीचे झुककर घुटने पर स्थापित करें।

1.क्रिया विधि–मध्य नौलि नाक से श्वास को बाहर निकालकर पेट को खाली करें। आंतरिक शक्ति से खाली पेट को आगे–पीछे हिलाएँ। श्वास लेने की इच्छा होने पर पेट का हिलाना बंद करें इस विधि को मध्य नौलि कहते हैं।

2.बाम नौलि – पुनः श्वास को बाहर निकाले, पेट को खाली करें, आंतरिक शक्ति से खाली पेट को दाहिने घुटने को किंचित दबाते हुए बाएँ से दाएँ यथा–शक्ति घुमाएँ। श्वास लेने की इच्छा होने पर क्रिया को बन्द करें। इसे बाम नौलि कहते हैं।

3.दक्षिण नौलि – श्वास को बाहर निकाल कर पेट को खाली करें। बाएँ घुटने को किंचित दबाते हुये आंतरिक शक्ति से खाली पेट को दाहिने से बाएँ घुमाएँ, श्वास लेने की इच्छा पर क्रिया समाप्त करे इस विधि को दक्षिण नौलि कहते हैं।

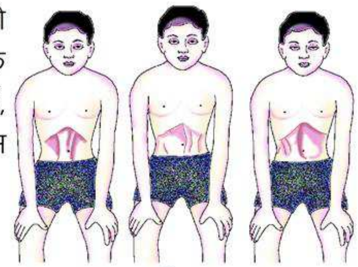
चित्र क्र. 7.33

"24 से 33 तक को क्रियाओं के लाभ"

1. पेट के समस्त विकार दूर होते है।
2. पेट के समस्त अंग शक्तिशाली बनते है।
3. पेट का मोटापा कम होता है।
4. आध्यात्मिक शक्ति का विकास होता है।
5. साधक दीर्घ आयु वाला बनता है।
6. कुण्डली जागरण में सहायक है।
7. पांचन संस्थान अपना कार्य तीव्र गति से करने लगती है।
8. नाभि केन्द्र को ठीक रखने में सहायक है।
9. रक्त का संचार भली–भांति होने लगता है।
10. शरीर की समस्त नाड़ियाँ शुद्ध बनती है।

34. कटि शक्ति विकासक क्रिया नं. 1 भाग – क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) दोनों हाथों को पीछे ले जाएँ, दाएँ हाथ से बाईं कलाई को पकड़े, अंगूठा छिपाकर बाईं मुठ्ठी बन्द करें, श्वास अन्दर लेते हुए गर्दन कमर को यथा शक्ति पीछे ले जाएँ ऊपर देखें, पीछे झुकें श्वास को छोड़कर सिर को शरीर का भार सम्हालते हुए, घुटने तक लाने का प्रयास करें, क्रिया को तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.34

(ख) बाएँ हाथ से दाहिने हाथ की कलाई पकड़े अंगूठा छिपाकर दाहिनी मुठ्ठी बन्द करें। शेष क्रिया (क) के समान पूरी तीन बार में करें।

35. कटि शक्ति विकासक क्रिया नं. – 2

स्थिति– समावस्था में खड़े रहेंगे।

विधि– दोनों पैरों को यथा शक्ति फैलाएँ, अंगूठा पेट की ओर रखते हुए हाथों को कमर पर स्थापित करें, श्वास अन्दर भरते हुए गर्दन कमर को अधिक से अधिक पीछे झुकाएँ ऊपर देखें श्वास को छोड़कर सिर को अधिक से अधिक नीचे लाएँ क्रिया तीन बार करें, तीसरी बार क्रिया करते समय दोनों हाथों को जमीन पर टिकाएँ और सिर को जमीन पर टिकाने का प्रयास करें। सिर टिकाकर हाथों को कमर पर रखें। यथाशक्ति रुकें। तत्पश्चात् हाथ के सहारे उछलकर पूर्व स्थिति में आएँ।

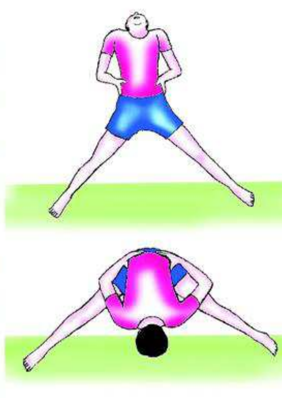

चित्र क्र. 7.35

36. कटि शक्ति विकासक क्रिया नं. – 3

स्थिति– दोनों पैरों में चार अंगुल का अन्तर रखते हुए खड़े हो।

विधि– करतल भाग अन्दर रखते हुए जंघा से सटाएँ, श्वास को लेते हुए गर्दन कमर को अधिक से अधिक पीछे की ओर झुकाएँ, ऊपर देखें, श्वास को छोड़कर सिर को शरीर का तोल सम्हालते हुए घुटने तक लाने का प्रयास करें, नेत्र खुले रखें। दोनों हाथों को पीठ की ओर तानें क्रिया को जल्दी–जल्दी 10 बार करें।

चित्र क्र. 7.36

37. कटि शक्ति विकासक क्रिया नं. – 4 भाग (क)

स्थिति– (अ) समावस्था में खड़े रहें।

विधि– दोनों हाथों को कंधों के बाजू से जमीन से समानान्तर फैलाएँ, हथेली जमीन की

ओर रखें अंगुलियाँ सटाएँ, श्वास को अन्दर भरते हुए बाएँ 30 अंश के कोण पर झुकाएँ। दाहिने हाथ को 150° कोण ऊपर तानें इस प्रकार दोनों हाथों को एक रेखा में रखें, साथ–साथ गर्दन कमर को भी झुकाएँ श्वास को बाहर निकालते हुए पूर्व स्थिति में आ जाएँ पुनः श्वास खींचते हुए गर्दन कमर के साथ दाहिने हाथ को 30 अंश के कोण पर नीचे की ओर झुकाएँ बाएँ हाथ को 150° पर ऊपर तानें। दोनों हाथ एक रेखा में रखें, श्वास छोड़कर पूर्व स्थिति में जाएँ ये क्रिया 10 बार करें।

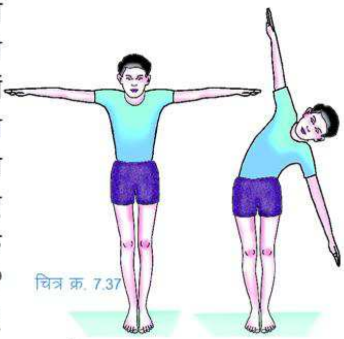

चित्र क्र. 7.37

स्थिति– (ख) दोनों पैरों में एक हाथ का अन्तर रखकर सीधे खड़े हो जाए।

विधि– भाग क के समान क्रिया का 10 बार पूरा करे।

38. कटिशक्ति विकासक क्रिया नं. – 5

स्थिति– दोनों पैरों मे एक हाथ का अन्तर रखकर सीधे खड़े हों।

विधि– दोनों हाथों को कन्धों के सामने करतल भाग एक दूसरे के सामने रखते हुए जमीन से समानान्तर फैलाएँ हाथों के कन्धों के बराबर अन्तर रखें, अंगुलियाँ सटाएँ। श्वास को निकालते हुए बाएँ हाथ को बाईं ओर जमीन से समानान्तर अर्धचक्राकार में पीछे की ओर ले जाएँ, दाहिने हाथ को कोहनी से मोड़कर दाहिनी हथेली को बाएँ कन्धे तक लाएँ। बाएँ हाथ के अंगूठे को पीछे देखें। श्वास को लेते हुए दोनों हाथों को पूर्व स्थिति में लाएँ, पुनः श्वास को बाहर करते हुए दाहिने हाथ को दाहिनी ओर अर्धचक्राकार में जमीन से समानान्तर पीछे की ओर ले जाएँ बाएँ हाथ को कोहनी से मोड़कर दाहिने कन्धे के समीप लाएँ, दाहिने हाथ के अंगूठे को पीछे देखें। श्वास लेते हुए दोनों हाथों को पूर्व स्थिति में लाएँ, क्रिया को 10 बार करें।

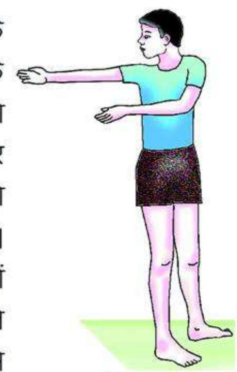

चित्र क्र. 7.38

34 से 38 तक क्रियाओं के लाभ

1. इन क्रियाओं के अभ्यास से कमर सुन्दर सुडौल और पतली होती है तथा लचीली बनती है।

2. कमर के दर्द मिटते हैं, कमर पुष्ट बनकर नृत्य कलाकारों के लिये उपयोगी है।
3. शरीर कान्तियुक्त और फुर्तीला बनता है।
4. उम्र के प्रथम 20 वर्ष तक साधक की लम्बाई बढ़ती है।

39. मूलाधर चक्र शुद्धि भाग – क

स्थिति– (क) समावस्था में खड़े रहें।

क्रियाविधि– श्वास को बाहर निकालें, पेट खाली करके मल द्वार को आंतरिक शक्ति से नाभिकी ओर खींचे शरीर में कंपन होने पर क्रिया समाप्त करें। क्रिया एक बार करें।

स्थिति– (ख) दोनों पैरों में चार अंगुल का अन्तर रख कर खड़े हों।

क्रियाविधि– भाग क के समान क्रिया को एक बार में पूरा करें।

लाभ–
1. प्राण अपान वायु एकत्र होने से कुण्डली जागृत में सहायक है। शरीर हल्का बनता है।
2. मस्तिष्क में ताजगी की अनुभूति होती है। शरीर शक्ति सम्पन्न बनता है।
3. कब्जियत दूर होती है। बवासीर की बीमारी मिटती है।
4. शरीर फुर्तीला और दीर्घायु बनता है।

चित्र क्र. 7.39

40. उपस्थ तथा स्वाधिष्ठान चक्र शुद्धि

स्थिति– दोनों पैरों में एक हाथ का अन्तर रखकर सीधे खड़े हो जायें।

विधि– श्वास को अन्दर खींचकर मूत्रेन्द्रिय ओर गुदा एक साथ यथाशक्ति नाभि की ओर खींचे। शरीर में कंपन होने पर क्रिया समाप्त करें। क्रिया एक बार करें।

लाभ–
1. मूत्राशय तथा गुदा के रोग ठीक होते हैं।
2. मधुमेह, भगन्दर, बवासीर जैसे रोग ठीक होते हैं।
3. महिलाओं के लिये विशेष लाभकारी है ।
4. गर्भाशय सम्बन्धी रोग ठीक होते हैं।
5. ब्रह्मचर्य के पालन में सहायक है। स्वप्नदोष दूर होते हैं।

चित्र क्र. 7.40

41. कुण्डलिनी शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– श्वास खींचते हुए बाएँ पैर की एड़ी उठाकर नितम्ब पर ठोकें श्वास छोड़कर पैर को पूर्व स्थिति में लाएँ पुनः श्वास खींचकर दाहिने पैर की एड़ी से नितम्ब पर ठोकें। श्वास छोड़कर दाहिने पैर को पूर्व स्थिति में लाएँ। 10 बार क्रिया करें।

चित्र क्र. 7.41

लाभ–

1. कुण्डली जागरण में सहायक है।
2. शरीर पुष्ट व फुर्तीला बनता है।
3. ज्ञान का समवर्धन होता है।
4. ब्रह्मचर्य की प्राप्ति होती है।
5. मोक्ष प्राप्ति में सहायक है।

42. जंघा शक्ति विकासक (1) भाग – क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि–

(क) श्वास को अन्दर खींचतें हुए कूदकर दोनों पैरों को बाजू में फेकें। दोनों हाथों को कन्धों के बाजू से सिर के ऊपर ले जाएँ। श्वास छोड़कर दोनों पैरों को हाथों के साथ कूदकर पूर्व स्थिति में लाएँ। क्रिया 10 बार करें।

(ख) श्वास को छोड़कर कूदते हुए दोनों पैरों को जंघा के बाजू में फेकें। दोनों हाथों को कन्धों के बाजू से सिर के ऊपर ले जाएँ हथेली बाहर की ओर रखें। श्वास को छोड़कर कूदते हुए और पैर को पूर्व स्थिति में लाएँ। क्रिया को 10 बार करें।

चित्र क्र. 7.42

43. जंघा शक्ति विकासक (2) भाग – क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) दोनों हाथों को जमीन से समानान्तर कन्धों के सामने फैलाएँ। हथेलियाँ जमीन की ओर रखें। श्वास को खींचकर (खींचते हुए) दोनों घुटने मिलाकर कुर्सी के समान बैठें। श्वास को छोड़कर पूर्व स्थिति में खड़े हो जाएँ क्रिया तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.43

(ख) दोनों हाथों को कंधों के बाजू में जमीन के सामानान्तर फैलाएँ। श्वास को खींचकर पंजों पर खड़े होते हुए घुटने फैलाकर नीचे बैठें श्वास छोड़कर पूर्व स्थिति में आ जाएँ। क्रिया तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.43 ब

लाभ–
1. जंघाएँ शक्तिशाली बनती है सुन्दर सुडौल बनती है।
2. जंघाओं का दर्द मिटता है।
3. जंघाओं का मोटापन कम होता है।
4. अधिक पैदल चलने वालों को थकान से मुक्ति मिलती है।
5. घुटना का दर्द मिटाता है।

44. जानुशक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि – श्वास को खींचते हुए बाएँ पैर की एड़ी को ऊपर उठाकर नितम्ब से स्पर्श करें। श्वास छोड़कर पैर को फुटबॉल को किक मारते हैं वैसे सामने फेकें। इसी विधि को दाहिने पैर से भी करें। क्रिया 10 बार करें।

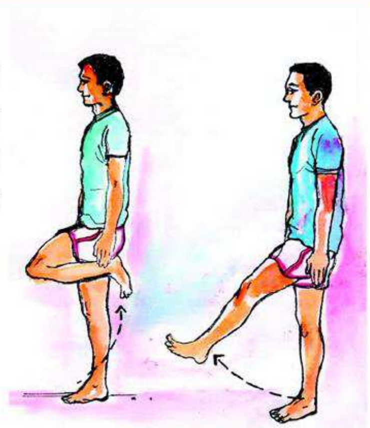
चित्र क्र. 7.44

लाभ–
1. जोड़ों का दर्द मिटता है।
2. गठियां की बीमारी ठीक होती है।
3. कुण्डली जागरण में सहायक है।

4. खिलाड़ियों के लिए उपयुक्त है।
5. घुटने सुन्दर सुडौल बनते है।

45. पिण्डली शक्ति विकासक

स्थिति – समावस्था में खड़े रहें।

विधि– अंगूठा छिपाकर मुठ्ठी बन्द करें। दोनों हाथों को जमीन से समानान्तर कंधों के सामने फैलाएँ करतल भाग एक दूसरे के सामने रखें। श्वास को खींचकर घुटने मिलाते बैठक लगाएँ। एड़ियों को जमीन पर टिकाकर रखें। श्वास छोड़कर खड़े होने के पूर्व दोनों हाथों को कंधों के सामने से चक्राकार में घुमाते हुए सीने के पास लाएँ। हाथों को तत्पश्चात् नीचे फेकें और पूर्व स्थिति में आ जाएँ क्रिया को पाँच बार करें।

चित्र क्र. 7.45

लाभ–
1. पिण्डलियाँ पुष्ट बनती है।
2. इनका दर्द मिटता है। जोड़ों का दर्द दूर होता है।
3. ब्रह्मचर्य की वृद्धि होती है।
4. कन्धे व हाथों का दर्द मिटता है।
5. सीना चौड़ा ओर पुष्ठ बनता है।
6. शरीर फुर्तीला बनता है।

46. पाद मूल शक्ति विकास भाग– क

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि–
(क) एड़ियाँ उठाकर पंजों पर खड़े हो जाएँ। श्वास सामान्य रखें। अपने स्थान पर 10–15 बार धीरे–धीरे उछलें। पंजों को जमीन पर टिकाकर रखें।

(ख) श्वास को सामान्य रखते हुए अपने स्थान पर पंजों को (बल पर) ऊपर नीचे 10–15 बार कूदें।

लाभ–
1. पैरों का दर्द मिटता है।
2. घुटने व जंघाएँ पुष्ट बनते हैं।

3. ब्रह्मचर्य की वृद्धि होती है।
4. पैर की अंगुलियों का दर्द मिटता है।

चित्र क्र. 7.46

चित्र क्र. 7.46 ब

47. गुल्फ, पादतल, पाद पृष्ठ शक्ति विकासक भाग (क)

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– (क) बाएँ पैर को जमीन से सामने की ओर लगभग 9'' ऊपर उठाकर तानें। पंजे से 0 को बनाएँ और मिटाएँ। श्वास को सामान्य रखते हुए क्रिया को तीन बार करें।

(ख) बाएँ पैर को पीछे की ओर तानें जमीन से लगभग 9'' ऊपर उठाकर पीछे की ओर तानें। पंजे से 0 को बनाएँ और मिटाएँ। श्वास को सामान्य रखते हुए क्रिया को तीन बार करें।

चित्र क्र. 7.47

(ग) भाग ''क'' के समान दाहिने पंजे से तीन बार क्रिया को पूरा करें।

(घ) दाहिने पैर को जमीन से लगभग 9'' पीछे उठाकर तानें, भाग ख के समान क्रिया तीन बार करें।

लाभ– 1. पैर की अंगुलियाँ, पंजें, पैर का पृष्ट भाग और तलुओं का दर्द मिटता है।

2. पैर सुन्दर सुडौल बनते हैं मोंच को दूर करने के लिए उपयुक्त है। अधिक चलने, दौड़ने से अधिक थकावट दूर होती है।

48. पादांगुली शक्ति विकासक

स्थिति– समावस्था में खड़े रहें।

विधि– दोनों हाथों की सहायता से पैर के पंजों को पल्टा कर आपस में जोड़ें, श्वास को सामान्य रखें, अंगुलियों के बल कूद कर सीधे खड़े हो जाएँ, क्रिया एक बार में पूरी करें।

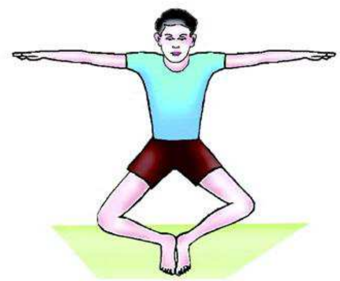

चित्र क्र. 7.48

लाभ–
1. पैरों की अंगुलियों को विशेष बल प्राप्त होता है।
2. पंजे व अंगुलियों का दर्द मिटता है।
3. चलने दौड़ने से होने वाली थकान दूर होती है।
4. अंगुलियों व पैर के पंजे लचीले होते हैं। तथा उनका दर्द भी मिट जाता है।

परिशिष्ट

प्रस्तावित मूल्य शिक्षा पाठ्यक्रम

प्राथमिक स्तर –

1. **स्वच्छता–**

व्यक्तिगत – शारीरिक स्वच्छता अपने कपड़े, मोजे, जूते, वस्त्र की सफाई। पुस्तकों को स्वच्छ रखना।

परिवेशीय – जहाँ स्वयं छात्र बैठते हैं उसकी सफाई अभ्यास, स्वच्छता की आदत।

2. **नियमितता** – सोने, जागने, विद्यालय जाने की आदत, प्रार्थना में उपस्थित रहने की आदत।
3. **शिष्टाचार** – माता–पिता परिवार के बड़े जनों, शिक्षकों के साथ शालीन भाषा का प्रयोग। सहपाठी के प्रतिप्रेम सम्मानपूर्वक व्यवहार।
4. **राष्ट्रीयता** – जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी का राष्ट्र प्रेम, राष्ट्र चिह्नों का ज्ञान।
5. **श्रम सहयोग** – अपने स्वयं के लिए दूसरों के लिए श्रम व सहयोग का कार्य। अपना कार्य स्वयं करने की आदत।

पूर्व माध्यमिक स्तर

1. देश भक्ति और राष्ट्रीयता।
2. सामाजिक एवं लोकतांत्रिक मूल्य, भाई–चारा, तीज–त्यौहारों में धर्मनिरपेक्षता, सामाजिक मूल्य, लोकतांत्रिक मूल्य।
3. कर्त्तव्य पालन अपने प्रति, परिवार, सामाजिक कर्त्तव्य।
4. सहयोग और सहायता की भावना– पारस्परिक सहयोग, करूणा, सहयोग, सम्मान।
5. दया करूणा सहनशीलता–प्राणियों के प्रति दया का भाव इस प्रकार का ज्ञान पारिवारिक व सबके लिए।
6. साहस और निडरता की भावना– जीवन संघर्ष में स्पर्धा।

7. पर्यावरण और प्राकृतिक साधनों के प्रति जागरूकता।
8. भारतीय संस्कृति परम्परा का ज्ञान और उसके प्रति आदर भाव।

उच्चतर माध्यमिक स्तर

1. अस्तेय और सच्चाई पर चलने का प्रयास।
2. समाज में बेईमानी, भ्रष्टाचार, अन्याय और शोषण के विरूद्ध जागरूकता।
3. दैनिक जीवन में समता व सहयोग की भावना का विकास।
4. समाजिक कुरीतियों की पहचान व उन्हें दूर करने का सक्रिय प्रयास।
5. धर्म, जाति, भाषा और लिंग के पूर्वाग्रह से ऊपर उठना।
6. सभी धर्मों का आदर करना और उसके मूलभूत सत्य को समझाना।
7. तम्बाकू, शराब और नशीले पदार्थों और बुरी आदतों से बचाव इनके प्रयोग से अपने अन्य लोगों को बचाने की सक्रियता।
8. विश्व बंधुत्व की भावना का विकास।
9. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास।

मानवीय मूल्यों के घटक

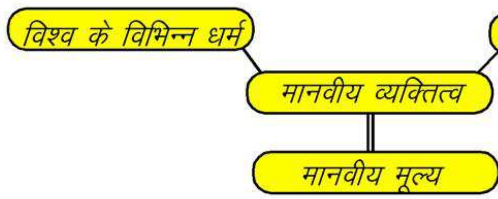

सत्य	सदाचरण	शान्ति	प्रेम	अहिंसा
सत्यवादिता	स्वच्छता	संयम	सद्भाव	दयालुता
जिज्ञासा	आरोग्य–वर्द्धक	षड्–रिपुओं से	जीवनधारियों के	शिष्टाचार
ज्ञान–पिपासा	रहन सहन	छुट कारा	प्रति दया	सौजन्यता
खोज वृत्ति	परिश्रम की महत्ता	षड्–सद्गुणों का	सहानुभूति	सेवा–भावना
आत्म–विवेचन	समय का सदुपयोग	विकास	मित्रता	भाईचारा
विवेक	नियमित जीवन	अनुशासन	देश–भक्ति	भद्रता
धर्म–निरपेक्षता	समय की पाबन्दी	पवित्रता	भक्ति	पर पीड़न से
सब धर्मों का आदर	स्वावलम्बन	सहनशीलता	सहिष्णुता	विरक्ति
विश्व व्यापी स्वयम्भू	स्वयं–सेवा	निष्ठा	मानवता	दूसरों की संस्कृति
सत्य	आज्ञा–पालन	आत्मानुशासन		का आदर करना
	कर्त्तव्यनिष्ठा	आत्म–नियंत्रण		करूणा
	सादा–जीवन	आत्म–सम्मान		विश्व–प्रेम
	ईमानदारी	व्यक्ति की गरिमा		नागरिक दायित्वों
	दूरदर्शिता	का मान		का भान
	सबका सम्मान	एकाग्रता		लोकतांत्रिक
	श्रद्धा	ध्यान		सामान्य हित
	सेवा–भावना	शांति		राष्ट्रीय–चेतना
	आत्म–निर्भरता			राष्ट्रीय–एकता
	स्वप्रेरणा			राष्ट्रीय–अखण्डता
	व्यवहार कुशलता			अस्पृश्यता की
	साहस, नेतृत्व			भावना से दूर
	निष्ठा, न्याय			राष्ट्रीय–संपत्ति की
	सामुदायिक कार्य			सुरक्षा
	सत् की भावना			समाज–सेवा
	समानता			सामाजिक–न्याय
	आत्म–त्याग			सामाजवाद
				पारस्परिक–निर्भरता